सत्यमेव जयते

विज्ञान गरिमा सिंधु

अंक-62

वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग
मानव संसाधन विकास मंत्रालय
(माध्यमिक और उच्चतर शिक्षा विभाग)
भारत सरकार

विज्ञान गरिमा

सिंधु

(त्रैमासिक पत्रिका)

अंक 62

जुलाई-सितंबर 2007

वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग

मानव संसाधन विकास मंत्रालय (उच्चतर शिक्षा विभाग)

भारत सरकार

1606 HRD/2008—1A

विज्ञान गरिमा सिंधु पत्रिका एक त्रैमासिक पत्रिका है। पत्रिका का उद्देश्य है - हिंदी के माध्यम से विश्वविद्यालयी छात्रों के लिए विज्ञान संबंधी उपयोगी एवं अद्यतन पाठ्य पुस्तकीय तथा संपूरक साहित्य की प्रस्तुति। इसमें वैज्ञानिक लेख, शोध-लेख, तकनीकी निबंध, शब्द-संग्रह, शब्दावली चर्चा, विज्ञान कविताएं, विज्ञान कथाएं, विज्ञान समाचार, पुस्तक समीक्षा आदि का समावेश होता है।

लेखकों के लिए निर्देश

1. लेख की सामग्री मौलिक, अप्रकाशित तथा प्रामाणिक होनी चाहिए।
2. लेख का विषय मूलभूत विज्ञान, अनुप्रयुक्त विज्ञान और प्रौद्योगिकी से संबंधित सामयिक विषय होना चाहिए।
3. लेख सरल हो जिसे विद्यालय/महाविद्यालय के छात्र आसानी से समझ सकें।
4. लेख लगभग 2000 शब्दों का हो। कृपया टाइप किया हुआ या कागज के एक ओर स्पष्ट हस्तलिखित लेख भेजें जिसके दोनों तरफ हाशिया भी छोड़ें।
5. प्रकाशन हेतु भेजे गए लेख के साथ उसका सार भी हिंदी में अवश्य भेजें।
6. लेख में आयोग द्वारा निर्मित शब्दावली का ही प्रयोग करें।
7. लेख में प्रयुक्त तकनीकी/वैज्ञानिक हिंदी शब्द का मूल अंग्रेजी पर्याय भी आवश्यकतानुसार कोष्ठक में दें।
8. श्वेत-श्याम या रंगीन फोटोग्राफ स्वीकार्य हैं। रेखाचित्र सफेद कागज पर काली स्याही से बने होने चाहिए।
9. लेख के प्रकाशन के संबंध में संपादक का निर्णय ही अंतिम होगा।
10. लेखों की स्वीकृति के संबंध में पत्र व्यवहार का कोई प्रावधान नहीं है।
11. अस्वीकृत लेख वापस नहीं भेजे जाएंगे। अत: लेखक कृपया टिकट-लगा लिफाफा साथ न भेजें।
12. प्रकाशित लेखों के लिए मानदेय की दर 250/- रुपए प्रति हजार शब्द है, तथा न्यूनतम राशि 150 रुपए और अधिकतम राशि 1000 रुपए है।
13. भुगतान लेख के प्रकाशन के बाद ही किया जाएगा।
14. कृपया लेख की दो प्रतियां निम्न पते पर भेजें:
    श्री अशोक एन सेलवटकर
    संपादक, विज्ञान गरिमा सिंधु
    वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग
    पश्चिमी खंड- 7, रामकृष्णपुरम्,
    नई दिल्ली- 110066
15. समीक्षा हेतु कृपया पुस्तक/पत्रिका की दो प्रतियां भेजें।

सदस्यता शुल्कः

	भारतीय मुद्रा	विदेशी मुद्रा	
सामान्य ग्राहकों/संस्थाओं के लिए प्रति अंक	रु. 14.00	पौंड 1.64	डॉलर 4.84
वार्षिक चंदा	रु. 50.00	पौंड 5.83	डॉलर 18.00
विद्यार्थियों के लिए प्रति अंक	रु. 8.00	पौंड 0.93	डॉलर 10.80
वार्षिक चंदा	रु. 30.00	पौंड 3.50	डॉलर 2.88

कापीराइट, 2007

प्रकाशक:
वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग
मानव संसाधन विकास मंत्रालय
भारत सरकार, पश्चिमी खंड-7,
रामकृष्णपुरम्, नई दिल्ली - 110 066

बिक्री हेतु पत्र-व्यवहार का पता:
वैज्ञानिक अधिकारी, बिक्री एकक
वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग,
पश्चिमी खंड -7, रामकृष्णपुरम्,
नई दिल्ली- 110 066
दूरभाष - (011) 26105211
फैक्स - (011) 26102882

बिक्री स्थान:
प्रकाशन नियंत्रक, प्रकाशन विभाग
भारत सरकार,
सिविल लाइन्स, दिल्ली - 110 054

विज्ञान गरिमा सिंधु

प्रधान संपादक

प्रो. के. बिजय कुमार

अध्यक्ष, वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग

संपादक

श्री अशोक सेलवटकर

प्रकाशन

डॉ. पी. एन. शुक्ल

वैज्ञानिक अधिकारी

कलाकार

श्री आलोक वाही

संपादन मंडल

1. प्रो. कीर्ति सिंह,
   कुलपति, श्रीमती इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय,
   रायपुर, हिमाचल प्रदेश कृषि विश्वविद्यालय,
   पालमपुर एवं देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय,
   फैजाबाद, इलाहाबाद- 211002
   (पूर्व अध्यक्ष, कृषि वैज्ञानिक नियुक्ति मंडल)
   सी- 1/9654, वसंत कुंज,
   नई दिल्ली-110070
2. प्रो. आर. सी. मेहरोत्रा,
   पूर्व कुलपति,
   राजस्थान, दिल्ली एवं इलाहाबाद विश्वविद्यालय,
   4/682, जवाहर नगर, जयपुर- 302004
3. डॉ. ओम विकास,
   वरिष्ठ निदेशक एवं अध्यक्ष,
   संचार और सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय,
   सूचना, प्रौद्योगिकी विभाग,
   इलेक्ट्रानिक निकेतन, लोदी रोड
   6, सी. जी. ओ. कॉम्प्लेक्स, नई दिल्ली- 110003
4. डॉ. कृष्ण बिहारी पांडेय,
   अध्यक्ष, लोक सेवा आयोग (उ. प्र.),
   10 कस्तूरबा गांधी मार्ग, इलाहाबाद
5. श्री एम.एल. गुप्ता,
   संयुक्त सचिव, राजभाषा विभाग,
   गृहमंत्रालय, लोकनायक भवन,
   खान मार्केट, नई दिल्ली- 110003
6. डॉ. शिव गोपाल मिश्र,
   प्रधान मंत्री, विज्ञान परिषद प्रयाग,
   महर्षि दयानंद मार्ग, इलाहाबाद- 221002
7. डॉ. चंद्र त्रिखा,
   निदेशक, हरियाणा साहित्य अकादमी,
   कोठी नं. 897, सेक्टर- 2, पंचकुला- 134112
8. डॉ. (श्रीमति) कृष्णा मिश्रा,
   कोआर्डिनेटर, जैव प्रौद्योगिकी केंद्र,
   नेहरू विज्ञान केंद्र,
   इलाहाबाद विश्वविद्यालय,
9. डॉ. निशीथ चतुर्वेदी,
   परामर्शदाता एवं अध्यक्ष, विकृति विज्ञान विभाग
   डॉ. राम मनोहर लोहिया अस्पताल, नई दिल्ली- 110001
10. श्री शंभुनाथ, आई. ए. एस.
    प्रमुख सचिव, महामहिम राज्यपाल,
    सचिवालय, लखनऊ
11. प्रो. मुरलीधर तिवारी
    निदेशक, भारतीय सूचना प्रौद्योगिकी संस्थान, इलाहाबाद
12. डॉ. रमेश दत्त शर्मा,
    अध्यक्ष, भारतीय विज्ञान लेखक संघ
    457, हवासिंह ब्लॉक,खेलगांव, एशियाड विलेज
    नई दिल्ली
13. अपर सचिव
    मानव संसाधन विकास मंत्रालय
    (उच्चतर शिक्षा विभाग)
    शास्त्री भवन, नई दिल्ली- 110001
14. संयुक्त शिक्षा सलाहकार (भाषा)
    मानव संसाधन विकास मंत्रालय
    (उच्चतर शिक्षा विभाग)
    शास्त्री भवन, नई दिल्ली- 110001
15. प्रो. के. बिजय कुमार, अध्यक्ष
    वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग
    मानव संसाधन विकास मंत्रालय
    (उच्चतर शिक्षा विभाग)
    पश्चिमी खंड- 7, रामकृष्णपुरम्
    नई दिल्ली- 110066

संपादकीय

पत्रिका के प्रस्तुत अंक में विविध विशिष्ट विषयों का पुष्पगुच्छ पाठकों को समर्पित है। इसके दो लेखों में क्रमश: लौह एवं इस्पात एवं दलहनों के विषय में बहुत ही व्यापक जानकारी उपलब्ध कराई गई है जो इनकी सर्वांगीण अद्‌यतन सूचना हम तक पहुंचाती है। दोनों ही लेखकों ने बड़े परिश्रम से पाठकों के लिए यह बहुमूल्य सामग्री जुटाई है। स्वास्थ्य के संबंध में बहुश्रुत लेखक डॉ. जे. एल. अग्रवाल का लेख 'हृदय रोगों का बढ़ता कहर' तथा डी.सी. सिंह का लेख 'हमारा आहार' उपयोगी ज्ञान प्रस्तुत करता है तो डॉ. रामकिशन का 'विकलांगों के लिए बाधारहित परिवेश' इस कड़ी को पूरा सा करता है। आयोग पूर्व विज्ञान उपनिदेशक श्री सतीश चंद्र सक्सेना ने शल्यविज्ञान अथवा सर्जरी की तकनीकी हिंदी शब्दावल के निर्माण से पूर्व सर्गों तथा परसर्गों के प्रयोग के विषय में रोचक तथा विद्‌वत्तापूर्ण जानकारी दी है। डॉ. नवीन कुमार बौहरा ने 'अकाल एवं सूखा प्रबंधन', जैसे नीरस विषय का सरल वैज्ञानिक प्रस्तुतिकरण किया है। सुश्री निर्देश निधि की कविता 'विनती' विज्ञान की गरिमा को सरस प्रदान कर रही है।

प्रस्तुत अंक में आयोग के प्रकाशनों की सूची विशेषकर तकनीकी शब्दावलियों और परिभाषा कोशों की सूची पहली बार विष्ह्य-वर्ग-वार प्रस्तुत की गई है ताकि लेखकां-पाठकों को अपने विषय की उपयुक्त शब्दावली/परिभाषा कोश को ढूंढ़ने में आसानी रहे। इन प्रकाशनों की बिक्री के विषयों तथा बिक्री केंद्रों की जानकारी पत्रिका के पिछले कवर के भीतरी ओर दे दी गई है।

पत्रिका के संबंध में आपकी प्रतिक्रियाओं की प्रतीक्षा रहेगी।

(प्रो. के. बिजय कुमार)
अध्यक्ष
वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग

अनुक्रम

लौह एवं इस्पात : राष्ट्रीय विकास व समृद्‌धि का आधार	सुरेशचंद्र भाटिया	1
सौर ऊर्जा: कल की ऊर्जा	जगनारायण	9
भारत में दलहनों का महत्त्व एवं संभावनाएं	डॉ. शंकर लाल और बालकृष्ण	13
अकाल एवं सूखा प्रबंधन	डॉ. डॉ. नवीन कुमार	21
कीटभक्षी पौधे : कुदरत के अजूबे	डॉ. दीपक कोहली	25
हृदय रोगों का बढ़ता कहर	डॉ. जे.एल. अग्रवाल	28
हमारा आहार	डॉ. सी. पी. सिंह	31
विकलांगों के लिए बाधा रहित परिवेश	डॉ. रामकिशन	34
सर्जरी शब्दावली	सतीश चंद्र सक्सेना	38

विविध स्तंभ

पुस्तक समीक्षा	भारत में साक्षरता अभियान	43
विज्ञान कविता	विनती	44
विज्ञान-सार	जैव ईंधन और पर्यावरण	45
लेखक परिचय		46
आयोग के प्रकाशन		47

1

लौह एवं इस्पातः राष्ट्रीय विकास एवं आर्थिक समृद्धि का मूल आधार

● सुरेश चन्द्र भाटिया *

इस्पात के एक छोटे से टुकड़े में अत्यधिक विशाल भार एवं मात्रा की कल्पना की जा सकती है। अपने विशाल भार एवं सुदृढ़ता के बल पर इस्पात ने मानव सभ्यता के विकास में अभूतपूर्व योगदान दिया है। इस्पात उत्पादन एवं खपत में वृद्धि के फलस्वरूप विश्व के अनेक राष्ट्रों में आर्थिक समृद्धि और विकास में महत्वपूर्ण योगदान संभव हो सका। लोहे व इस्पात के उत्पादन ने राष्ट्र के विभिन्न क्षेत्रों में निर्माण एवं उद्योग, उत्पादन, औद्योगिक, संरचनात्मक निर्माण और व्यवसाय को एक मूलभूत आधार प्रदान किया है और इन्हें मेरुदंड के सम्मान सुदृढ़ता प्रदान की है।

प्रस्तावना

आदिकाल से विश्व के अनेक भागों में, विभिन्न नदियों के तट पर मानव सभ्यता के उदय के साथ-साथ आरंभ हुई विकास प्रक्रिया को क्रमशः पाषाण युग, ताम्र युग, कांस्य युग एवं लौह युग के रूप में जाना जाता है। लेकिन भिन्न-भिन्न भौगोलिक क्षेत्रों में इनकी विकास प्रक्रिया अलग-अलग समय-काल पर हो सकती है। सिंधु नदी घाटी - इंडस वैली - के किनारे विकसित आर्य सभ्यता में प्रारंभिक पाषाण युग के बाद ताम्र युग का उदय ईसा पूर्व 3500से, कांस्य युग ईसा पूर्व 2000 से और लौह युग ईसा पूर्व 1200 से आरंभ माना जाता है। यहाँ स्वर्ण और चांदी के आभूषण तो शताब्दियों पूर्व से बनते रहे, लेकिन नकद मुद्रा के लिए सिक्कों के रूप में इनका प्रयोग लगभग ईसा पूर्व 600 से ही आरंभ हुआ।

यद्यपि लौह एंव इस्पात उत्पादन-प्रक्रिया का विकास, पश्चिमी विकसित देशों में आद्योगिक क्रांति के साथ -साथ बीसवीं सदी के आरंभ से हुआ, तथापि 19वीं सदी से ही भारत को सर्वप्रथम लौह एवं इस्पात का उत्पादक देश होने का गौरव प्राप्त है। शताब्दियों पूर्व दिल्ली में निर्मित अशोक स्तंभ आज भी अपनी धातुकर्म विशिष्टता के बल पर, जंगरोधक गुणों के साथ, बड़ी शान से अपना सिर ऊंचा किए खड़ा है। इसकी सुदृढ़ता और जंगरोधक गुणों की विशिष्टता तो आज भी दुनिया भर के धातुकर्मी विशेषज्ञों के लिए कौतूहल का विषय बनी हुई है।

संक्षिप्त पूर्वावलोकन

भारत में सन् 1870 में बंगाल आयरन वर्क्स द्वारा बंगाल-बिहार सीमा पर कुल्टी में सर्वप्रथम "ओपन टॉप धमन भट्टी" की स्थापना की गई, जहाँ तत्कालीन उन्नत तकनीक का प्रयोग करके सन् 1875 से कच्चे लोहे का उत्पादन आरंभ हुआ। इस्पात उत्पादन के लिए भी कुल्टी में ही सर्वप्रथम छोटे आकार की "ओपन हर्थ फर्नेस" की स्थापना की गई, जहाँ सन् 1905 में इस्पात उत्पादन आरंभ हुआ। लौह एंव इस्पात उत्पादन की इन छोटी इकाइयों का बाद में बर्नपुर में स्थापित इंडियन आयरन ऐन्ड स्टील कंपनी में विलय किया गया, जहाँ सन् 1922 से नियमित रूप से इस्पात उत्पादन आरंभ हुआ।

भारत में आधुनिक इस्पात उद्योग का सूत्रपात करने का श्रेय जमशेदजी टाटा को जाता है, जिन्होंने सन् 1905 में जमशेदपुर में टाटा आयरन ऐन्ड स्टील कंपनी (टिस्को) की स्थापना की। इसमें 1,20,000 टन कच्चे लोहे का उत्पादन करके उसे 85,000 टन इस्पात में परिवर्तित करने

* पूर्व मुख्य अभियंता-डिजाइन, स्टील अथॉरिटी, 284, सेक्टर- 1, चिरंजीव विहार, गाजियाबाद - 201 001

की क्षमता थी। टिस्को इस्पात संयंत्र में पहले टन तप्त इस्पात का सन् 1911के अंत में उत्पादन शुरू हुआ और सन् 1912 से यहाँ नियमित रूप से इस्पात उत्पादन आरंभ हुआ।

इसके बाद सन् 1923 में तत्कालीन मैसूर राज्य में सर मोक्षगुंडम् विश्वेश्वरैया के अथक प्रयत्नों के फलस्वरूप भद्रावती में एक अत्यंत छोटी इस्पात उत्पादन इकाई - मैसूर आयरन ऐन्ड स्टील वर्क्स की स्थापना की गई जहां वुड डिस्टिलेशन फ्लांट में लकड़ी के भभके से कोयला बनाकर, लौह खनिज के साथ भट्ठी में डालकर इस्पात उत्पादन किया जाने लगा।

सर विश्वेश्वरैया ने भद्रावती के पास उपलब्ध लौह खनिज के अपार भंडार और आसपास के जंगलों से लकड़ी प्राप्त की। दुर्भाग्यवश उन्हीं दिनों अंतर्राष्ट्रीय बाजार में लोहे की कीमत 100 रुपये प्रति टन से घटकर 45 रुपये प्रति टन रह गई। यह सचमुच एक आश्चर्यजनक उपलब्धि थी कि सर विश्वेश्वरैया ने बहुत ही कम लागत पर इस्पात उत्पादन करके, रेल व स्टीमर द्वारा उसे अमेरिका ले जाकर, तटवर्ती क्षेत्रों में वहाँ की उत्पादन लागत से भी कम कीमत पर इस्पात बेचने में सफलता प्राप्त की।

सन् 1936 में स्टील कॉरपोरेशन ऑफ बंगाल ने आसनसोल के पास बर्नपुर में एक इस्पात कारखाना लगाया, जहाँ सन् 1939 में इस्पात उत्पादन आरंभ किया गया। बाद में इस कारखाने का तथा कुल्टी में स्थापित छोटी इकाई का इंडियन आयरन ऐन्ड स्टील कंपनी-इस्को के साथ विलय किया गया। इस प्रकार स्वतंत्रता की पूर्व-संध्या पर भारत के पास टिस्को, भद्रावती तथा इस्को तीन एकीकृत इस्पात संयंत्र थे।

इस्पात क्षेत्र एंव औद्योगिक नीति

द्वितीय पंचवर्षीय योजना में लौह एंव इस्पात क्षेत्र के महत्व पर विशेष बल दिया गया। इस्पात उद्योग के विस्तार को सर्वोच्च प्राथमिकता दी गई, क्योंकि किसी भी अन्य औद्योगिक उत्पादन की अपेक्षा इस्पात ही औद्योगिक विकास की गति निश्चित करता है। इसके अतिरिक्त औद्योगिक नीति संकल्प 1956 के अनुसार इस्पात उद्योग के सर्वांगीण विकास का दायित्व भारत सरकार को सौंपा गया। उत्पादन के आवश्यक उपकरणों एंव मशीनों में आत्मनिर्भरता प्राप्ति के लिए छठे व सातवें दशक में अनेक प्रमुख नीतिगत निर्णय लिए।

निर्यात की दृष्टि से निराशावादी प्रवृत्ति के उस वातावरण में प्राथमिक एंव मूल उद्योगों में तेजी से निवेश करने का एकमात्र ऐसा विकल्प था, जो विकास का मार्ग प्रशस्त करने के लिए आवश्यक था। भारी निवेश योजनाओं पर पैसा लगाने के लिए घरेलू पूंजीगत बाजार की अनुपस्थिति तथा उद्योग में निजी क्षेत्र के एकछत्र राज पर रोक, आदि कुछ ऐसे कारण थे, जिनसे भारत सरकार ने इस्पात क्षेत्र पर अपना कड़ा नियंत्रण रखा, जो दसवें दशक में उदारीकरण प्रक्रिया आरंभ होने तक जारी रहा।

एकीकृत इस्पात उत्पादन संयंत्र

छठे दशक के आरंभ में इस्पात की मांग में वृद्धि के साथ-साथ भारत में स्थित इकाइयों की क्षमता में विस्तार के अतिरिक्त सार्वजनिक क्षेत्र में नए इस्पात संयंत्र लगाने की आवश्यकता महसूस की गई। राउरकेला में सपाट इस्पात संयंत्र लगाने की आवश्यकता महसूस की गई। राउरकेला की स्थापना के लिए 1953 में जर्मनी के कुरूप-डेमाग से, भिलाई में 1.0 मिलियन टन प्रतिवर्ष क्षमता के संयंत्र की स्थापना के लिए तत्कालीन सोवियत संघ से, तथा दुर्गापुर में 1.0 मिलियन टन प्रतिवर्ष क्षमता के संयंत्र की स्थापना के लिए ब्रिटेन से समझौता हुआ।

इनके फलस्वरूप सातवें दशक के आरंभ में राउरकेला, भिलाई एंव दुर्गापुर में एक-एक मिलियन टन वार्षिक क्षमता के तीन इस्पात संयंत्र एक साथ अस्तित्व में आए। उस समय एक साथ तीन-तीन इस्पात संयंत्रों की स्थापना किसी अविकसित, यहाँ तक कि विकसित राष्ट्र के लिए भी एक विशिष्ट उपलब्धि का द्योतक कही जा सकती है। सातवें दशक के अंत तक भिलाई इस्पात संयंत्र की वार्षिक क्षमता 2.5 मिलियन टन, दुर्गापुर इस्पात संयंत्र की वार्षिक क्षमता 1.6 मिलियन टन तथा राउरकेला इस्पात संयंत्र की वार्षिक क्षमता 1.8 मिलियन टन तक बढ़ाई गई।

छठे दशक के अंतिम दौर से सार्वजनिक क्षेत्र में एक अन्य एकीकृत इस्पात संयंत्र की बोकारो में स्थापना के लिए योजना बनाई गई, परंतु बोकारो परियोजना का सूत्रपात होने में विलंब होता रहा, क्योंकि संयुक्त राज्य अमेरिका द्वारा तकनीकी सहायता स्वीकृत न किए जाने पर तत्कालीन सोवियत संघ इस पृष्ठभूमि में प्रविष्ट हुआ तो था, परंतु उसने तकनीकी सहायता एंव विशेषज्ञता आरंभ करने से

पूर्व परियोजना विनिर्देशों में प्रमुख परिवर्तन करने का सुझाव दिया । अंततोगतत्वा बोकारो इस्पात संयंत्र में सन् 1974-75 से इस्पात उत्पादन आरंभ हुआ। नवें दशक के आरंभ में भिलाई एंव बोकारो की क्षमता बढ़ाकर 4.0 मिलियन टन प्रतिवर्ष की गई।

दुनिया भर के लौह एंव इस्पात की मांग में संभावित वृद्धि के अनुमान पर, सन् 1992 में 3.0 मिलियन टन वार्षिक क्षमता के साथ छठा एकीकृत इस्पात संयंत्र विशाखापत्तनम् के राष्ट्रीय इस्पात निगम के अंतगर्त चालू हुआ। यह भारत का पहला समुद्र तट पर स्थित निर्यातक एकीकृत इस्पात संयंत्र है।

विद्युत् आर्क फर्नेस इकाइयां :

विद्युत आर्क फर्नेस स्टील मेकिंग इकाइयां लघु संयंत्रों के रूप में जानी जाती हैं, जो सन् 1947 से पूर्व भी विद्यमान थीं। परंतु निजी क्षेत्र में इनकी औपचारिक स्थापना सन् 1959 से आरंभ हुई। इस्पात की भारी किल्लत तथा स्क्रैप की आसान उपलब्धि से आठवें दशक में लघु इस्पात संयंत्रों का भारी विकास हुआ। एक अनुमान के अनुसार सन् 1967-68 में विद्युत् आर्क फर्नेस क्षेत्र में वार्षिक क्षमता 0.50 मिलियन टन थी, जो 1973 -74 में बढ़कर 3.0 मिलियन टन हो गई।

परंतु आठवें दशक के मध्य से लघु इस्पात संयंत्रों के सामने अनेक समस्याएं आने लगीं-जैसे राज्य विद्युत् बार्डो द्वारा बिजली में भारी कटौती एंव स्क्रैप की कीमत में भारी वृद्धि, आदि। इनकी 5 से 12 टन की रेंज में बहुत अल्प क्षमता के कारण एक तो ये इकाइयां किफायती नहीं रहीं और दूसरे, इस प्रकार की इकाइयों में तकनीकी उन्नयन भी संभव नहीं है। वर्तमान रूप में कुल मिलाकर 104 लाख टन वार्षिक क्षमता विद्युत् आर्क फर्नेस क्षेत्र में है, परंतु इनके सकल क्षमता उपयोग पर बढ़ी हुई निवेश लागत, बढ़ी हुई बिजली दरें एंव पुरानी तकनीकी का प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

विद्युत् आर्क फर्नेस प्रणाली में लॉयड्स , जिंदल एवं एस्सार ने आधुनिक तकनीकी वाली नई मिलें स्थापित की हैं और आकार की दृष्टि से इनमें उत्पादन किफायत करने की संभावना है। परंपरागत रूप से एकीकृत इस्पात क्षेत्र के एकछत्र राज्य में नई इकाइयों के प्रवेश से सारे बाजार अंश में बदलाव आया है।

रि-रोलिंग इकाइयां :

सन् 1946 में 1,40,000 टन वार्षिक क्षमता के साथ देश में कुल 32 पंजीकृत रि-रोलिंग इकाइयां थीं। छठे दशक के अंत में बार एंव रॉड की किल्लत से विवश होकर भारत सरकार ने रि-रोलिंग इकाइयों का विकास किया। सन् 1946 में देश में 47 लाख टन वार्षिक क्षमता के साथ कुल 431 पंजीकृत इकाइयां थीं। इस समय देश में 210 लाख टन वार्षिक क्षमता के साथ 1018 पंजीकृत रि-रोलिंग इकाइयां चालू है। विगत 15 वर्षों में रि-रोलिंग इकाइयों की संख्या अथवा उनकी क्षमता में कोई परिवर्तन नहीं हुआ है। प्रमुख भारतीय इस्पात उत्पादन इकाइयों व उनकी क्षमता के आंकड़े तालिका-1 में तथा सन् 1966-97 के इस्पात उत्पादन के प्रतिशत तुलनात्मक आंकड़े तालिका-2 में दिए गए हैं:

तालिका - 1

भारत में प्रमुख इस्पात उत्पादन इकाइयाँ

इस्पात संयंत्र इकाइयाँ		उत्पादन क्षमता (मिलियन टन प्रतिवर्ष)
1. सेल- बोकारो इस्पात संयंत्र	-	4.0
2. सेल-भिलाई इस्पात संयंत्र	-	4.0
3. सेल -राउरकेला इस्पात संयंत्र	-	1.8
4. सेल- दुर्गापुर इस्पात संयंत्र	-	1.6
5. सेल- एलॉय इस्पात संयंत्र	-	1.0
6. सेल- सेलम इस्पात संयंत्र	-	0.07
7. सेल- बर्नपुर इस्पात संयंत्र	-	0.4
8. सेल- विश्वेश्वरैया आयरन ऐन्ड स्टील	-	0.2
9. सेल - महाराष्ट्र इलेक्ट्रोस्मेल्ट	-	0.1
10. टाटा स्टील कंपनी	-	3.0
11. राष्ट्रीय इस्पात निगम - विशाखापत्तनम्	-	3.0
12. विद्युत् आर्क फर्नेस इकाइयां	-	7.0
13. इंडक्शन फर्नेस इकाइयां	-	3.0
14. एस्सार स्टील लिमिटेड	-	2.0
15. लॉयड स्टील इंडस्ट्रीज लि.	-	0.6
16. जिंदल स्ट्रिप्स इंडिया लि.	-	0.5

1606 HRD/2008—2A

पहुंची है। इस्पात उद्योग के क्षेत्र में उत्पादन वृद्धि के साथ-साथ यह भी आवश्यक होगा कि इस्पात की खपत दर को 12 किग्रा प्रति व्यक्ति से बढ़ाकर 65 किग्रा प्रति व्यक्ति प्रतिवर्ष करने के प्रयास किए जाएं।

यद्यपि सन् 1997 में भारत में तैयार इस्पात की खपत दर 26 किग्रा प्रति व्यक्ति थी, जो विश्व की औसत खपत दर 150 किग्रा प्रतिवर्ष की अपेक्षा बहुत कम थी जबकि विश्व के विकसित देशों में प्रति व्यक्ति इस्पात खपत दर 400 किग्रा पर स्थिर है, तथापि भारत में तैयार इस्पात की अखिल भारतीय खपत पर नजर डालें तो उसमें बढ़ोतरी की प्रवृत्ति स्पष्ट देखी जा सकती है। प्राथमिक और ग्रामीण क्षेत्रों में इस्पात की खपत को बढ़ाने के अनेक अवसर सुलभ हैं। इनसे इस्पात की घरेलू खपत बढ़ाने की विपुल संभावनाएं हैं, जिनसे इस्पात उद्योग भी प्रगति के मार्ग पर अग्रसर होगा।

यद्यपि इस्पात की खपत दर में वृद्धि के लिए इस्पात उद्योग को ही आवश्यक उपाय करने होंगे, तथापि यह वृद्धि मुख्यत: निम्नलिखित कारणों पर निर्भर करेगी:

1. प्रति व्यक्ति राष्ट्रीय आय में वृद्धि ,
2. गुणतायुक्त इस्पात उत्पाद की उपलब्धता,
3. इस्पात उत्पादों की कीमतों में कमी,
4. औद्योगिकीकरण के अन्य क्षेत्रों में समुचित प्रगति,
5. संरचनात्मक क्षेत्रों में समुचित प्रगति,
6. भवन निर्माण क्षेत्रों में समुचित प्रगति,
7. इंजीनियरी क्षेत्रों में समुचित प्रगति,
8. यातायात के क्षेत्रों में समुचित प्रगति, तथा
9 कृषि तथा ग्रामीण क्षेत्रों में समुचित प्रगति ।

भारतीय इस्पात उद्योग में तथा औद्योगिकीकरण के अन्य क्षेत्रों में निम्नलिखित सकारात्मक एवं दृष्टिगोचर परिवर्तन, इस्पात की खपत दर में वृद्धि के सूचक हैं और इस्पात उद्योग के सुनहरे भविष्य के प्रतीक हैं :

1. आर्थिक उदारीकरण से प्रोत्साहन,
2. इंजीनियरी उद्यमियों में अदम्य उत्साह,
3. इस्पात उत्पादन की नवीन तकनीकों की उपलब्धता,
4. इस्पात उत्पादन एवं विक्रय का भूमंडलीकरण,
5. अनेक उद्योगों में संभावित विदेशी निवेश, और
6. विदेशी मुद्रा की मुक्त परिवर्तनशीलता।

वर्तमान समय में तैयार इस्पात की प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष 90 प्रतिशत खपत केवल 15 प्रतिशत व्यक्तियों द्वारा की जा रही है। बाकी बचे लगभग 85 प्रतिशत व्यक्तियों के एक भाग को इस्पात खपत के अतिरिक्त दायरे में लाने से ही इस्पात की खपत में आशाजनक वृद्धि की संभावना है। घरेलू खपत दर में वृद्धि के अतिरिक्त इस्पात के निर्यात में वृद्धि की संभावनाओं पर भी विचार करना होगा।

गुणता में सुधार

इस्पात उत्पादन की वर्तमान पद्धति - इन्गॉट व स्लैबिंग मिल प्रक्रिया से इस्पात उत्पाद की गुणवत्ता में अनेक समस्याएं पाई गई, जिनसे प्रमुख हैं- फिन्स, बल्ज, स्कैब, लैमिनेशन, असमांगी रासायनिक बनावट, नॉन मेटेलिक पदार्थ, उच्च सल्फर/ मैग्नीज अनुपात, किनारों में टूटन / दरारें, घुलनशील गैस, अधिक जलन व गर्मी के निशान, कैम्बर, गेज में असमानता, आकार-प्रकार में असमानता, आदि।

आधुनिकीकरण के उपरांत इस्पात उत्पादन की सतत कास्टिंग प्रौद्योगिकी से हंत इस्पात(किल्ड स्टील) तथा स्यूडो रिमिंग ग्रेड के इस्पात का उत्पादन अधिकता से किया जा सकेगा। साथ ही तप्त स्ट्रिप मिल उपकरणों का आधुनिकीकरण करके प्रतिष्ठापन के उपरांत तप्त इस्पात पट्टिका की गुणवत्ता में भी अनेक सुधार होने की आशा है। इनकी थिकनेस टॉलरेंस, स्ट्रिप, क्राउन, कॉयल टेलिस्कोपिसिटी, स्ट्रिप फ्लैटनेस, कैम्बर, आदि, गणवत्ता के मानको में महत्वपूर्ण सुधार होने की आशा है।

ऊष्मा उर्जा में बचत

आधुनिकीकरण के उपरांत इस्पात के तप्त रोल उत्पादन में खपत होने वाली ऊष्मा उर्जा मात्रा के 0.905 गीगा कैलोरी प्रति टन इस्पात से घटकर 0.576 गीगा कैलोरी प्रति टन होने की आशा है, जो 36.48 प्रतिशत कम है। इससे एक वर्ष में 0.767 मिलियन गीगा कैलोरी ऊष्मा ऊर्जा की बचत होने की महती संभावना है।

श्रम-उत्पादकता में वृद्धि

आधुनिकीकृत इकाइयों तथा उपकरणों के परिचालन तथा रख-रखाव आदि के लिए नए कार्मिकों की भर्ती न करके वर्तमान कार्मिकों को ही आवश्यक प्रशिक्षण देकर पुन: नियुक्त किया गया है। इसके फलस्वरूप विक्रेय इस्पात उत्पादन की श्रम-उत्पादकता में 95.5 टन प्रति

कार्मिक प्रतिवर्ष से बढ़कर 113.2 टन प्रति कार्मिक प्रतिवर्ष होने की आशा है।

उन्नत प्रौद्यागिकी से विशिष्ट इस्पात श्रेणियां

नवीनतम उन्नत प्रौद्योगिकी के प्रयोग के फलस्वरूप भारतीय इस्पात उद्योग में विशिष्ट श्रेणी के इस्पात के उत्पादन में यथासंभव आत्मनिर्भरता प्राप्त की जा सकी है। विशिष्ट इस्पात की कुछ प्रमुख श्रेणियां निम्नलिखित हैं :

1. हॉट रोल्ड नैरो प्लेट एवं शीट,
2. कोल्ड रोल्ड शीट,
3. गैल्वनाइज्ड प्लेन एवं नालीदार शीट,
4. टिन मिल ब्लैक प्लेट,
5. अधिक लंबी रेल पटरियां,
6. हैवी स्ट्रक्चरल इस्पात,
7. मर्चेन्ट इस्पात,
8. तेल व गैस परिवहन के लिए इस्पात पाइप,
9. स्पाइरल वेल्ड पाइप,
10. आर्मर्ड प्लेट-विजयंत, अर्जुन व अजय टैंकों के लिए,
11. जैकाल प्लेट - रक्षा वाहन, बुलेट-प्रूफ जैकेट, भारी ट्रैक्टर-ट्रॉली हेतु,
12. स्पेड प्लेट - युद्धक टैंक निर्माण के लिए,
13. सेल सागर- नेवी जहाजरानी के लिए,
14. एडमिरल प्लेट - लिएंडर फ्रिगेट, युद्धपोत निर्माण हेतु,
15. मैराजिंग प्लेट - एस एल वी योजना के लिए ,
16. आईएससीडीवी प्लेट - जी एस एल वी योजना के लिए,
17. विशिष्ट इस्पात - फास्ट ब्रीड एटॉमिक रिएक्टर के लिए ,
18. इलेक्ट्रॉनिक टिन प्लेट,
19. सिलिकॉन स्टील शीट - विद्युत् उपकरण निर्माण हेतु,
20. स्टील स्लीपर, फिश प्लेट - रेलवे लाइन के लिए,
21. व्हील एंड ऐक्सल - रेलवे लोकोमोटिव के लिए ,
22. अलॉय कंस्ट्रक्शन स्टील,
23. कार्बन कंस्ट्रक्शन स्टील,
24. स्प्रिंग स्टील / बॉल बियरिंग स्टील और
25. स्टेनलेस स्टील।

भविष्य दृष्टि

भारतीय इस्पात उद्योग में विश्व का अग्रणी इस्पात उत्पादक देश बनने की क्षमता है। अगले 25-30 वर्षों में अग्रणी इस्पात उत्पादक देश के स्थान पर पहुंच कर स्थिर रहने के लिए भारतीय इस्पात उद्योग को अपनी प्राथमिकताएं निर्धारित करके अपने आधुनिकीकरण कार्यक्रम को तेजी से कार्यान्वित करने के उपाय करने होंगे। इसके लिए इस्पात उप्पादन तथा औद्योगिक विकास के सभी स्तरों पर आवश्यक ध्यान देना होगा, जैसे :

1. संपूर्ण औद्योगिक विकास को प्राथमिकता,
2. इस्पात उत्पाद की कीमतों में कमी,
3. औद्योगिकीकरण के सभी क्षेत्रों में प्रगति,
4. भवन निर्माण एवं संरचना क्षेत्रों में प्रगति,
5. इस्पात उत्पादन में नवीन प्रौद्योगिकी व गुणवत्ता को प्राथमिकता,
6. नये इस्पात संयंत्रों की स्थापना ,
7. इस्पात उत्पादन क्षमता में वृद्धि को प्राथमिकता।

उदारीकरण के नव-परिवर्तन के अंतर्गत हाल ही में इस्पात उत्पादन क्षमता की वृद्धि सीमा को हटाकर इस्पात विक्रय कीमत तथा विक्रय प्रणाली पर से सभी प्रकार के नियंत्रण समाप्त किए गए हैं। इसके अतिरिक्त भारतीय इस्पात उद्योग को आयातित इस्पात के मुकाबले समान अवसर प्रदान करने के लिए एक ओर जहां आयातित इस्पात पर अतिरिक्त आयात शुल्क लगाया गया है, वहीं दूसरी ओर भारत में निर्मित इस्पात पर उत्पादन शुल्क में कमी की गई है तथा कच्चे माल, कोयले और इस्पात के माल-भाड़े में भी कमी की गई है।

नव-परिवर्तन का लाभ उठाते हुए इस्पात उद्योग को अग्रणी स्थान प्राप्त करके भारत के आर्थिक एवं आद्योगिक विकास को गति प्रदान करने के लिए एकदम मौलिक एवं साहसिक सोच के साथ कदम उठाने की आवश्यकता है। इस्पात उत्पादन एवं विक्रय की प्रक्रिया में लगभग भूमंडलीकरण करके इस्पात उद्योग को एक नई दिशा प्रदान करने की आवश्कता है। इसके साथ ही यह भी आवश्यक है कि इस्पात उद्योग को अपनी योजनाओं को प्राथमिकता के साथ कार्यान्वित करने के लिए सरकार की ओर से आवश्यक संरक्षण एवं प्रोत्साहन मिले।

भारतीय इस्पात उद्योग के लिए प्रगति के पथ पर एक और प्राथमिकता का अवसर इस्पात उत्पादों के निर्यात

के रूप में संभव है। मांग एवं उत्पादन के अंतराल को देखते हुए यह आवश्यक है कि उद्योग प्राथमिकता के साथ इस्पात की विशिष्ट श्रेणियों के निर्यात में वृद्धि करने को प्रयास करें।

निर्यात की ओर ध्यान देने से भारतीय इस्पात उद्योग को विश्व बाजार में अपने इस्पात उत्पादों की बिक्री एवं तदनुसार मांग में वृद्धि के उपाय करने का एक स्वर्णिम अवसर प्राप्त होने की आशा है। लेकिन इसके लिए इस्पात उद्योग को अपने उत्पादों की गुणवत्ता में सुधार करके उन्हें अंतर्राष्ट्रीय मानक स्तर तक लाना होगा तथा मूल्यों में प्रतिस्पर्धा के अनुसार इस्पात कम कीमत पर उपलब्ध कराने के प्रयास करने होंगे।

भारतीय इस्पात उद्योग के लिए प्रतिस्पर्धात्मक स्तर तक मूल्यों में कमी करना कोई असंभव काम नहीं है। भारत में अभी कच्चे यथा लौह खनिज व अन्य फ्लक्स की कीमतें बहुत कम होने के साथ ही श्रम-शक्ति भी कम मूल्य पर उपलब्ध है। लेकिन इस्पात उद्योग को अपने संयंत्रों में आवश्यक तकनीकी उन्नयन के साथ-साथ, यंत्रीकरण एवं स्वचालन को प्राथमिकता देकर, विश्व स्तर की कार्य-कुशलता एवं निपुणता के साथ अंतराष्ट्रीय मानक स्तर के अनुरूप, गुणवत्तायुक्त इस्पात उत्पादों की उपलब्धता सुनिश्चित करनी होगी।

❑

ट्रांस फैट

वनस्पति से तले खाने में यह खूब पाया जाता है और दिल की बीमारी (हार्ट अटैक), उच्च रक्त चाप और मोटापे-जैसी, खतरनाक बीमारियों की जड़ है। डाक्टर इसे बैड कॉलेस्ट्रॉल (एल डी एल) मानते हैं, यानि ऐसा फैट जो खून की नालियों में जाकर चिपक जाता है। अमेरिका में जुलाई 2008 तक ट्रांस फैट युक्त घी के इस्तेमाल को पूरी तरह बंद कर दिया जाएगा। सभी रेस्टोरेंटों में इससे बना खाना प्रतिबंधित हो जाएगा।

डॉक्टरों के मुताबिक पाम ऑयल को हाइड्रोजिनेट करके ट्रांस फैटी एसिड यानी टी. एफ. ए बनाया जाता है। हाइड्रोजन का इस्तेमाल इसलिए होता है कि इसमें तला खाना लंबे समय तक खराब न हो। खाने में इससे अच्छा स्वाद भी आ जाता है। लेकिन ट्रांस फैक्ट का इस्तेमाल भयंकर बीमारियों की जड़ है। भारतीय खाने में इसका खूब इस्तेमाल होता है।

2

सौर ऊर्जा : कल की ऊर्जा

● जगनारायण *

इस पृथ्वी पर उपलब्ध सभी प्रकार की प्राकृतिक ऊर्जाओं का मूल आधार ब्रह्मांड में उपस्थित सूर्य ही है। भारतीय वाङ्मय में अनादि काल से ही सूर्य को ऊर्जा के अजस्र स्रोत के रूप में जाना जाता है। इस पृथ्वी पर उपस्थित समस्त पदार्थों से विविध प्रकार की ऊर्जा की उत्पत्ति, संचरण, संभरण एवं वृद्धि का आधार भी सूर्य को ही माना गया है। यजुर्वेद में ''सूर्यात्मा जगतस्युषश्च'' कह कर समस्त ऊर्जाओं को स्रोत सूर्य को ही बताया गया है। सूर्य की महत्ता, उपयोगिता और क्षमता के कारण ही हिंदू परंपरा में सूर्य की पूजा सृष्टि के पालक भगवान विष्णु के अंश के रूप में होती है।

भारतीय समाज के अतिरिक्त प्राचीन ग्रीक और रोमन समाज के लोग भी सूर्य की रोशनी के विभिन्न प्रकार की क्रिया-कलापों में प्रयोग के अभ्यस्त थे। प्राचीन ग्रीक समाज में सौर ऊर्जा का प्रयोग भवनों को ठंडा और गर्म रखने में किया जाता था। इसी प्रकार रोमन साम्राज्य में शीशे के परावर्तकों के प्रयोग से प्राप्त ऊष्मा से विभिन्न प्रकार के काम लिए जाने के लिए उदाहरण भी मिलते हैं। यहाँ सौर ऊर्जा को विभिन्न प्रकार के शीशे के परावर्तकों के द्वारा घनीभूत कर शक्तिशाली प्रहारक अस्त्र के रूप में शत्रु सेना के विनाश के लिए भी प्रयोग किया गया है।

आधुनिक युग में सूर्य से मिलने वाली अक्षय ऊर्जा से बिजली उत्पादन की युक्ति सौर प्रकाश वोल्टीय प्रणाली पर आधारित एक हाइटेक प्रौद्योगिकी है, जिसका प्रयोग आज अनेक प्रकार के कार्यों में हो रहा है। बीसवीं सदी के महान वैज्ञानिक अल्बर्ट आइंस्टाइन के द्वारा सूरज की रोशनी को बिजली की धारा में बदलने की तकनीक के खोजे जाने के बाद सूरज की रोशनी से मिलने वाली ऊर्जा को 'भविष्य की ऊर्जा' के रूप में देखा जाने लगा है। महान आइंस्टाइन की इस खोज को विश्व समुदाय ने लगभग तीन सौ वर्ष पूर्व माइकल फैराडे के द्वारा की गई बिजली की खोज के समकक्ष बताया है।

आधुनिक युग में सौर ऊर्जा

सूर्य से प्राप्त होने वाली ऊर्जा को उपयोग के लिहाज से दो भागों में विभाजित किया जाता है। पहली श्रेणी में सौर ऊर्जा को उपकरणों के माध्यम से इकट्ठा कर घनीभूत परावर्तन प्रक्रिया से विभिन्न प्रकार के उपयोगी उपकरणों द्वारा प्राप्त ऊष्मा का प्रयोग अनेक तरह के घरेलू और औद्योगिक कार्यों में किया जाता है। दूसरी श्रेणी में आइंस्टाइन की खोज से विकसित सौर ऊर्जा को प्रकाश वोल्टीय पद्धति से सौर पैनलों द्वारा प्राप्त करके उससे उपलब्ध बिजली की धारा का उपयोग किया जाता है। इसे 'सौर उर्जा से विद्युत् उत्पादन प्रक्रिया' कहा जा सकता है।

इस प्रकार अलग-अलग माध्यमों से सौर ऊर्जा से ऊष्मा (ताप) और विद्युत् प्राप्त कर विभिन्न कार्यों में उसका उपयोग किया जाता है।

सौर ऊर्जा का तापीय प्रयोग

आधुनिक युग में तकनीशियनों ने सौर-ऊर्जा के तापीय प्रयोग के लिए अनेक उपयोगी उपकरणों का विकास किया है। विकसित उपकरणों में 'सौर जल ऊष्मक' को स्थापित करना और उसका उपयोग तथा रखरखाव बेहद आसान है। इसके द्वारा भारी मात्रा में जल को 60

* कृषि एवं विज्ञान पत्रकार, ईशान स्टूडियो, श्री विश्वनाथ मंदिर, काशी हिन्दू विश्वद्यालय, वाराणसी

डिग्री सेल्सियस तक गर्म किया जा सकता है जिसका उपयोग घरों और उद्योगों में होता है। विशेषज्ञों के अनुसार सौर जल ऊष्मक के प्रयोग से प्रति वर्ष बिजली की भारी बचत संभव है। सोलर कुकर का प्रयोग भोजन पकाने में होता है। बॉक्स सोलर कुकर, कार्ड बोर्ड सोलर कुकर और डिश सोलर कुकर बाजारों में बिकने लगे हैं जिसमें बॉक्स टाइप सोलर कुकर आज शहरों और गांवों सभी जगह लोकप्रिय हैं। इसमें एक साथ चार तरह की भोजन-सामग्री ,यथा-चावल, दाल, सब्जियां आदि कम समय में पकाई जा सकती है। इसमें खाना पकाने का काम धीरे-धीरे होता है जिससे इसमें पकने वाले भोज्य पदार्थों में अधिकतम पोषक तत्व सुरक्षित रहते हैं। यह 'हॉट केस' का भी काम करता है जिससे इसमें बनने वाला भोजन देर तक गर्म और ताजा रहता है। कार्ड बोर्ड सोलर कुकर हल्का और सस्ता सोलर कुकर है जिसमें सामान्य अवस्था में मिलने वाली सूर्य की किरणों से दो घंटे में दो-तीन व्यक्तियों का भोजन पक जाता है।

डिश कुकर

उच्च परावर्तन में सक्षम ऐल्युमिनियम की चादरों से डिश की बड़े आकार को गोलाकार गहरी तस्तरी-जैसा बना यह कुकर एक महबूत स्टैंड पर लगा होता है जिसे सूरज की दिशा में घुमा कर रोशनी को एक बिंदु पर घनीभूत कर एक साथ 10-15 लोगों को भोजन पकाया जाता है। इससे रसोई गैस और स्टोव की भांति तेजी से भोजन पकता है। डिश कुकर बड़े परिवारों या समूह के भोजन पकाने में उपयोगी है। इसके साथ ही सामुदायिक सौर कुकर (शैफलर) में एक साथ 40-45 लोगों का खाना सौर ताप से बनाया जाता है। इसी क्रम में सौर ऊर्जा के प्रयोग में लगे वैज्ञानिकों ने हजारों लोगों का इक्ट्ठा खाना पकाने में सक्षम वाष्प कुकिंग प्रणाली भी विकसित की है। इन सामुदायिक सौर कुकरों के प्रयोग छात्रावासों के मेसों, होटलों तथा बड़े समूहों के लिए भोजन पकाने में किया जा सकता है।

इसी प्रकार सौर जल तापकों पर आधारित सौर टंकियों के जल से उद्योगों एवं अन्य कार्यो के लिए गर्म जल उपलब्ध होता है। इसी क्रम में सौर जल ऊष्मकों के उपयोग से जल का प्रयोग नहाने, कपड़ा धोने, बर्तन मांजने के काम में किया जाता है। इनका उपयोग घरों के अलावा, छात्रावासों, सामुदायिक आवासों , रेस्टोरेन्टों , होटलों और अस्पतालों आदि में किया जाता है। सौर जल तापकों (ऊष्मकों) के अलावा सौर वायु तापकों के माध्यम से भी सौर ऊर्जा को दोहन कर उसमे सौर वायु तापकों (एअर हीटर) वायु शुष्मकों (ड्रायर) का भी इस्तेमाल घर, उद्योग और खेती में किया जा सकता है। छोटे पैमाने पर इस प्रणाली से धान, मक्का, अदरक, काली मिर्च आदि फसलों को आसानी से सुखाया जाना संभव है। बड़ी शुष्कन प्रणाली के प्रयोग से चाय, तंबाकू, दाल, मसाले, लकड़ी, दूध तथा फल को सुखाने का कार्य किया जाता है। इसी क्रम में वैज्ञानिकों ने सौर-तापीय जल उत्तोलन पंप प्रणाली का भी निर्माण किया है। यह प्रणाली कम तापमान पर संवृतपाश ऑर्गेनिक रैनकिन .साइकिल पद्धति पर काम करती है। इसमें फ्रियॉन -2 कार्यकारी तरल (वर्किंग फ्लुइड) के रूप में प्रयुक्त होता है। क्वथन द्वारा या रिक्त ट्यूब संग्राहकों में इकट्ठा सौर ऊर्जा इस तरल को भाप में बदल देती है। संग्राहक क्षेत्र के दोहरे कार्यशील इंजन के भीतर संतृप्त इस भाप के कण फैल कर यांत्रिक ऊर्जा उत्पन्न कर देती है। इस प्रकार सौर तापीय पंप में ऊर्जा को यांत्रिक ऊर्जा में बदल दिया जाता है। इस यांत्रिक ऊर्जा का प्रयोग फ्लाई व्हील तथा बेल क्रैंक लीकेज यंत्रों के द्वारा खुले कुएं या बोर कुएं के अंदर रखे गए जल-पंप से चलाने के लिए किया जाता है। इस प्रणाली से चलने वाले 500 और 1000 वाट हाइड्रॉलिक क्षमता के पंपों से 40 से 50 फुट नीचे से पानी को निकाल कर बाग-बगीचों और खेतों की सिंचाई का काम लिया जा सकता है।

सौर ऊर्जा से विद्युत् उत्पादन

आइंस्टाइन द्वारा आविष्कृत प्रकाशवोल्टीय पद्धति का इस्तेमाल सौर ऊर्जा से बिजली का करेन्ट प्राप्त करने के लिए सौर माड्यूलों (पैनलों) के प्रयोग के लिए होता है, ये सारे माड्यूल या पैनल कई सौर सेलों से मिल कर बनते हैं। इन सौर सेलों के निर्माण में सिलिकन, जर्मेनियम, कैडमियम, सल्फाइड जैसे फोटोवोल्टेक पदार्थों का उपयोग होता है। विशेष क्षमताओं से युक्त वे पदार्थ जहां अंधेरे में विद्युत्‌रोधक की तरह काम करते हैं वहीं

सूर्य का प्रकाश पड़ने पर इनमें अर्धचालकीय प्रक्रियाएं सक्रिय हो उठती हैं।

प्रकाश वोल्टीय (फोटोवोल्टेक) विद्युत् का विशेषता

सौर पैनलों द्वारा विद्युत् उत्पादन में किसी प्रकार का प्रदूषण नहीं होता है, साथ ही विद्युत् उत्पादन में संस्थापन व्यय के अलावा अप्यंत अल्प या नहीं के बराबर व्यय आता है। इसके रखरखाव में भी बहुत कम खर्च आता है। कुल मिलाकर फोटोवोल्टेक विद्युत् उप्पादन प्रक्रिया सस्ती और पूर्णरूपेण प्रदूषण-रहित विद्युत् उत्पादन प्रक्रिया है।

प्रकाश वोल्टेक माड्यूलों (सौर पैनलों) से पैदा होने वाली बिजली आसानी से उपलब्ध होने के कारण ग्रामीण क्षेत्रों के लिए भी विशेष रूप से उपयोगी है। इससे गांव के किसी भी स्थान पर बिजली प्राप्त कर उसका उपयोग किया जा सकता है। आसान रखरखाव तथा जटिलता-रहित इस प्रणाली से उत्पन्न होने वाली बिजली का उपयोग घरों की रोशनी, टेलीविजन, पंखों, रेडियो के अलावा उन सौर पंपों के संचालन में भी किया जा रहा है जो ग्रामीण अंचलो में पेय जल एवं सिंचाई के लिए उपयोगी सिद्ध हो रहे हैं। ग्रामीण संचार कार्यक्रमों के लिए इस प्रणाली से स्थानीय एवं निजी स्तर पर उत्पादित बिजली की विशेष उपयोगिता है। इससे विद्युत् रहित गांवो को फैक्स, टेलीफोन, ई-मेल आदि समस्त आधुनिक संचार साधनों तथा साइबर कार्यक्रमों के लिए ग्रामीण क्षेत्र में बिजली उपलब्ध कराकर गांवों की सूचना एवं संचार व्यवस्था को उपयोगी रूप दिया जा सकता है। ग्रामीण दवाखानों एवं प्राथमिक चिकित्सा केंद्रों में दवाओं एवं टीकों को लंबे समय तक सुरक्षित रखने के लिए (यातायात साधनों से वंचित सुदूर वनांचलों में स्थित गांवों के लिए) सौर विद्युत् प्रणाली अत्यंत उपयोगी है। इसके माध्यम से ऐसे साधन रहित गांवों को आधुनिक साधनों से जोड़ कर उनका विकास किया जाना संभव है।

अमेरिका द्वारा 1954 में अंतरिक्ष यानों की बिजली के लिए फोटोवोल्टेक सेलों का भी प्रयोग किया गया। आज के इस संचार युग में विश्व के सभी देशों द्वारा प्रक्षेपित संचार उपग्रहों की विद्युत् आपूर्ति के लिए सौर सेलों का ही प्रयोग हो रहा है। आज दुनियां में 20 से भी अधिक देश फोटोवाल्टेक सेल बना रहे हैं। अमेरिका, इंग्लैंड, जापान, और आस्ट्रेलिया जैसे विकसित राष्ट्रों के वैज्ञानिकों का मत है कि आने वाली आधी सदी में विश्व की समस्त विद्युत् आवश्यकताओं की पूर्ति में सौर विद्युत् उर्जा की हिस्सेदारी अस्सी प्रतिशत होगी।

इस भविष्यवाणी का आधार है अमेरिका के वैज्ञानिकों द्वारा खोजी गई एक ऐसी प्रणाली जिसके द्वारा पृथ्वी पर आ रही सूर्य की ऊर्जा को एकत्र करके उससे सामान्य से 60, 000 गुनी अधिक ऊर्जा प्राप्त हो सकेगी। विकासशील देशों के ग्रामीण अंचलों में आजकल सूरज की रोशनी से बिजली पैदा करने वाले दो उपकरण सौर लालटेन और सौर फिक्स यूनिट्स विशेष उपयोगी हैं। सौर लालटेन को सूरज की रोशनी से 6से 8 घंटे तक चार्ज कर तीन घंटे तक बिना किसी खर्च के रोशनी पाई जा सकती है – यद्यपि कोहरे और बदली में धूप न मिलने के कारण चार्जिंग धीमी हो जाती है। सोलर लालटेन में लेड एसिड बैटरी लगी होती है जो सौर पैनलों पर लगे सेल (माड्यूलों) के माध्यम से परिवर्तित सौर उर्जा से चार्ज हो जाती हैं। इस प्रकार के सोलर पैनल के सेल 20 से 35 वर्ष तक काम करते हैं। इतनी अवधि के बाद पूरे सोलर पैनल या उस पर लगे सौर सेलों को बदल कर फिर से बिजली पैदा की जा सकती है। सौर लालटेन में लगी बैटरी की बिजली पैदा करने की क्षमता 12 वोल्ट से 10 वाट पीक की होती है।

सौर फिक्स यूनिट के द्वारा चालीस वाट क्षमता वाले सौर पैनल से दो कॉम्पैक्ट फ्लोरोसेन्ट लाइटें जल सकती हैं और एक अतिरिक्त प्वाइन्ट भी मिलता है जिससे टेलीविजन या रेडियो चलाया जा सकता है।

सोलर पंप

सौर फोटोवोल्टेक जल पंप: सौर पंपों से जमीन के नीचे के भूगर्भीय जल को खींचने के अलावा तालाब, नदी और अन्य जल स्रोतों से पानी खींच कर उसका उपयोग सिंचाई तथा पेयजल के रूप में किया जाता है।

हालांकि अभी सौर फोटोवोल्टेक पंपो के मामले में साधन-संपन्न लोग ही आगे आ रहे हैं- जिसके मूल में है इसकी लंबी-चौड़ी कीमत, अत: मध्यम एवं सीमांत कृषक अभी इस प्रक्रिया का उपयोग करने में अपने को सक्षम

नहीं पाते, अन्यथा विकासशील देशों में इसका प्रयोग काफी अधिक होता।

सौर ऊर्जा का विकास क्रम: वर्तमान सामय में शुद्ध सिलिकॉन आधारित सेल के कारण सौर प्रणाली से बिजली बनाने की प्रक्रिया का संस्थापन खर्च विकासशील देशों में सामान्य व्यक्ति के लिए महंगा पड़ रहा है।`

विश्व में घटते पारंपरिक ऊर्जा स्रोतों तथा उनसे होने वाले प्रदूषण के मद्दे नजर विश्व भर के वैज्ञानिक सौर ऊर्जा से बिजली बनाने की सस्ती प्रक्रियाओं की खोज में जी-जान से जुटे हुए हैं। लेकिन वैश्विक पेटेन्ट प्रणाली की गोपनीयता के चलते इस क्षेत्र में हो रही नई खोजों के विषय में विस्तृत तथ्य सामने नहीं आ पा रहे हैं। इस दिशा में जो सूचनाएं मिल रही हैं वे अत्यंत अल्प हैं। आज वैज्ञानिक क्रिस्टल-रहित (ॲमार्फस) सिलिकॉन सेलों के विकास में लगे हुए हैं। ऐसे सेल के निर्माण पर कम व्यय बैठता है। कैडमियम सल्फाइड तथा कापर इंडियम डाई-सेलिनाइड अधारित बहु- क्रिस्टलीय, पतले फिल्म युक्त सौर सेलों के विकास की दिशा में भी प्रयास हो रहा है। इस दिशा में भारतीय विज्ञान संस्थान, बेंगलूर कापर इंडियम डाइसेलिनाइड सौर सेलों के रूप में ऐसी प्रणाली के निर्माण में सफलता पाई है जिसके सौर सेलों की दक्षता 12-14 प्रतिशत है। इसी प्रकार आधुनिक नैनोटेक्नालॉजी के सहयोग से भी सस्ते सोलर सेलों के निर्माण में वैज्ञानिक प्रयासरत है। पेटेन्ट-जनित गोपनीयताओं के चलते इस क्षेत्र में हो रहे शोध से संबंधित थोड़ी ही मात्रा में मिलने वाले शोध-सूचनाओं से संकेत आने लगे हैं कि आने वाले दशकों में सौर ऊर्जा से विद्युत् उत्पादन के साधनों के मूल्यों में व्यापक रूप से कमी आएगी। तब सौर ऊर्जा की विद्युत् प्रणालियां जनसामान्य की क्रय-क्षमता के भीतर होंगी।

इसी क्रम में पृथ्वी के ऊर्जा-संकट से हमेशा-हमेशा के लिए निजात पाने के लिए विश्व के शीर्षस्थ देशों के वैज्ञानिक अब ऐसे उपग्रहों के निर्माण में जुट गए हैं जिन्हें अंतरिक्ष में स्थापित कर सौर ऊर्जा को कई गुना अधिक मात्रा में धरती पर उतारा जा सके। इस प्रणाली के अंतर्गत सूर्य की ऊर्जा को अंतरिक्ष में एकत्रित कर पृथ्वी पर भेजा जाएगा, जहां उसे विद्युत् ऊर्जा में बदल कर प्रयोग किया जा सकेगा। इस दिशा में काम कर रही विश्व की अनेक अंतरिक्ष संस्थाओं , विश्वविद्यालयों और औद्योगिक समूहों के द्वारा पिछले तीन दशकों में गंभीरता से प्रयास जारी हैं। 1970 से ही इस दिशा में विचार -विमर्श के लिए अनेक गोष्ठियां और बैठकें हो रही हैं। नासा (अमेरिका) तथा नागदा (जापान) ने अलग-अलग दीर्घकालीन परियोजनाओं पर काम आरंभ कर दिया है, जिसका लाभ आने वाले समय में विश्व जनसमुदाय को मिल सकेगा। ❑

कबूतर को मनचाहा उड़ाने में कामयाबी

चीन के वैज्ञानिकों ने कबूतरों की उड़ान को नियंत्रित करने में कामयाबी हासिल की है। वैज्ञानिकों ने कबूतरों के दिमाग में माइक्रो-इलेक्ट्रोड लगाकर यह सफलता हासिल की । उनका दावा है कि दुनिया भर में कबूतरों पर अपनी तरह का यह पहला प्रयोग किया गया है। कबूतरों में लगाए गए इलेक्ट्रोड ही कबूतर को दाएं-बाएं मुड़ने या ऊपर-नीचे उड़ने की कमांड देते हैं। कंप्यूटर के जरिए ही इलेक्ट्रोड को संकेत भेजे जाते हैं और उसके बाद इलेक्ट्रोड उनके मुताबिक दिमाग के हिस्से को स्टिम्यूलेट करके कमांड मानने के लिए प्ररित करता है।

3

भारत में दलहनों का महत्व एवं संभावनाएं

● डॉ. शंकर लाल* एवं बाल कृष्ण

दलहनी फसलों के उत्पादन में भारत वर्ष का विश्व में प्रथम स्थान है। विभिन्न दलहनी फसलों- अरहर, उड़द, मूंग, मोठ, चना मटर आदि के लिए किस प्रकार की मृदा उपयुक्त रहेगी और देश के किस क्षेत्र में कौन सी दलहनी फसल की पैदावार अधिक होगी यह सब महत्वपूर्ण जानकारी इस लेख में दी गई है। इसके अतिरिक्त सभी प्रमुख दालों की किस्में, उनकी उत्पादन क्षमता, पकने में लगने वाला समय और उनके गुणों को विभिन्न सारणियों द्वारा दर्शाया गया है। लेख अनुसंधानकर्ताओं और किसानों के लिए समान रूप से उपयोगी है।

1. दलहनों का महत्व

दलहन एक विशेष किस्म की फसलें हैं जिसमें वायुमंडल से नाइट्रोजन संचय करने का एक विलक्षण गुण पाया जाता है। इस गुण के कारण यह नाइट्रोजन की अपनी आवश्यकता अधिकांश सीमा तक स्वयं पूरा कर लेती है। इसके साथ ही साथ भूमि की उर्वरा शक्ति बढ़ जाती है, जिससे इनके बाद बोई जाने वाली फसलों को लाभ पहुंचता है। यह प्रोटीन का एक अमूल्य स्रोत है जिसके कारण भोजन में इसका बहुत महत्व है। इनका महत्व निम्न प्रकार दिखाया जा रहा है।

1.1 **दलहन प्रोटीन का प्रचुर स्रोत:** दलहनों में खाद्यान्नों की तुलना में 2 से 3 गुणा प्रोटीन अधिक पाया जाता है। दलहनों के प्रोटीन का गुण अन्य स्रोतों के प्रोटीन से भिन्न होता है। उदाहरणार्थ, इनके प्रोटीन में लाइसीन नामक ऐमीनो अम्ल पर्याप्त मात्रा में पाया जाता है जो कि खाद्यान्नों के प्रोटीन में कम पाया जाता है। इसके विपरीत इनके प्रोटीन में मिथियोनीन ऐमीनो अम्ल कम पाया जाता है जो कि खाद्यान्नों में अधिक पाया जाता है। यही कारण है कि दालों और खाद्यान्नों को मिलाकर खाने से भोजन की पौष्टिकता बढ़ जाती है।

1.2 **दलहनों से भूमि की उर्वरा शक्ति बढ़ती है:** दलहनी फसलों को उगाने से अगली फसलों को 25-30 किलो नाइट्रोजन प्रति हेक्टेयर उपलब्ध हो जाती है। इनसे पत्तियां इतनी गिरती है जिससे मिट्टी में कार्बोनिक पदार्थो की वृद्धि होती है।

1.3 **दलहनों से भूमि के स्वरूप में उन्नति होती है:** इन फसलों की जड़ें मूसला (taproot) होती हैं जिससे मिट्टी खुल जाती है। जब इनको हरी खाद के लिए उगाते हैं तो खरपतवारों का नियंत्रण होता है जिससे पानी व पोषक तत्वों का ह्रास रुक जाता है।

1.4 **शुष्क कृषि के लिए दलहनी फसलें:** इनकी मूसला जड़े भूमि में गहरी जाती हैं जिससे यह भूमि में गहराई तक पानी का अवशोषण करती हैं। इस गुण के कारण इनमें सूखे को सहन करने की एक विलक्षण शक्ति पाई जाती है। यद्यपि ये सूखा-अवरोधी फसलें है लेकिन इनमें भी सूखे को सहन करने की शक्ति में विभिन्नता पाई जाती है। रबी की दलहनों में मसूर और लाख और खरीफ की दलहनों में मोठ और अरहर अधिक सूखे को सहन कर सकती है। इस गुण के कारण इन फसलों का शुष्क कृषि में एक विशेष योगदान है।

1.5 **अंतर-सस्य के लिए दलहनी फसलें:** पौधों के स्वरूप और पकने की अवधि अनुरूप होने के कारण यही फसलें अन्य फसलों के साथ अंतर-सस्य यथा मिश्रित सस्य के लिए उपयुक्त हैं। इन फसलों को अंतर-सस्य विधि से उगाने से फसलों से अतिरिक्त लाभ के रूप में पैदावार मिल जाती है। चना + जौ; चना + अलसी; चना + सरसों; मटर + सरसों; मसूर + सरसों; मसूर + अलसी; अरहर + ज्वार; अरहर + कपास; अरहर + मूंगफली; अरहर + बाजरा; अरहर + उड़द/ मूंग; अरहर + सोयाबीन; मूंग + कपास; मूंग + गन्ना; इत्यादि कुछ प्रमुख दलहनी फसलों के अंतर-सस्य हैं।

* पूर्व निदेशक, भारतीय दलहन अनुसंधान संस्थान, कानपुर - 208024

1.6 **फसल चक्र में दलहनी फसलें:** दलहनी फसलों को फसल चक्र में अपनाने से भूमि की उर्वरा शक्ति में ह्रास नहीं आता है। अधिकांश खाद्यान्न फसलों के बाद दलहनी फसलें उगानी चाहिए।

1.7 **बहुसस्यीय कृषि के लिए दलहनी फसलें:** मूंग, उड़द, लोबिया और अरहर में कुछ शीघ्र पकने वाली जातियां उपलब्ध हैं। अत: यही बहुसस्यीय कृषि के लिए आदर्श फसलें हैं। इनको फसल-चक्र में उगाने से फसल सघनता में 300 से 400 प्रतिशत बढ़ जाती है।

1.8 **दलहनी फसलें हरे चारे के लिए:** दाने के अतिरिक्त दलहनी फसलों का हरा चारा भी पशुओं के लिए पौष्टिक व रुचिकर होता है। लोबिया और ग्वार अधिकतर हरे चारे के लिए उगाई जाती हैं। इसके अतिरिक्त मटर, मोंठ, अरहर, मूंग आदि भी पशुओं को हरे चारे के रूप में खिलाते हैं।

1.9 **हरी पत्तियां** भी सब्जी के रूप में प्रयोग की जाती है। इनमें लोबिया, मटर, ग्वार और चना प्रमुख है।

1.10 **अरहर की लकड़ी** ईंधन, टोकरी, छपार, आदि के काम में लाई जाती है।

2. दलहनों की भारत में वर्तमान स्थिति

दलहनी फसलों के उगाने में भारत विश्व में एक विशेष स्थान रखता है। विश्व में उगाई जाने वाली फसलों के क्षेत्रफल और पैदावार में भारत का क्रमश: 35-36% और 27-28% योगदान है। एशिया में भारत का स्थान प्रथम है। यह देश इस प्रकार की दलहनी फसलें उगाता है जो कि अन्य देशों में नहीं उगाई जाती हैं, जिनका विवरण सारणी-1 में दिया गया है।

सारणी 1: भारत में उगाई जाने वाली दलहनी फसलें (2004-05)

दलहन	प्रतिशत योगदान		उत्पादकता
	क्षेत्रफल	पैदावार	(कि. / हे.)
1. चना	29.69	42.19	844
2. अरहर।	5.49	19.14	733
3. उड़द	9.74	9.69	429
4. मूंग	15.49	11.53	475
5. मसूर	4.95	6.92	741
6. लाख	2.05	3.64	698
7. अन्य (कुल्थी, मोठ, मटर, लोबिया, राजमा)	22.59	6.69	528

देश में उगाई जाने वाली दलहनों में चने का स्थान प्रथम है। इसका योगदान कुल दलहन के क्षेत्रफल व पैदावार में क्रमश: 25-69% और 42-19% है। इसके बाद अरहर, उड़द और मूंग का स्थान आता है। कुल्थी, मोठ, लाख, लोबिया राजमा ऐसी दलहनी फसलें हैं जो कि एक विस्तृत क्षेत्रफल में उगाई जाती है। लेकिन इनकी खेती एक या दो राज्यों में ही की जाती है। लाख की खेती कुछ राज्यों में कानूनी तौर पर बंद कर दी गई है क्योंकि इसमें एक ऐसा तत्व पाया जाता है जिसके कारण इसके लगातार खाने में लकवा बीमारी हो जाती है।

3. दलहनी फसलों के क्षेत्रफल व पैदावार में भारत, एशिया व विश्व में रूख

3.1 भारत में दलहनी फसलों का क्षेत्रफल, पैदावार और उत्पादकता (1952-51 से 2004-05 तक) सारणी 2 में दर्शाई गई है।

सारणी 2 : भारत में 1950-51 से दलहनी फसलों का क्षेत्रफल, पैदावार व उत्पादकता

वर्ष	क्षेत्रफल (लाख है.)	पैदावार (लाख टन)	पैदावार (कि./हे.) (उत्पादकता)
1950-51	190.9	841.1	441
1960-61	235.6	127.0	539
1970-71	225.4	118.2	524
1980-81	224.6	106.3	473
1990-91	246.6	142.6	578
2000-01	200.3	110.8	544
2004-05	224.7	133.8	595

सारणी में दर्शाए आंकड़ों से स्पष्ट है कि दलहनी फसलों का क्षेत्रफल 200 से 400 लाख हेक्टेयर के नीचे रहा है। इनकी पैदावार और उत्पादकता में वृद्धि हुई तो है लेकिन यह वृद्धि फसलों में हुई वृद्धि की तुलना में कम है।

सारणी 3: भारत में 1950-51से खाद्यान्नों का क्षेत्रफल, पैदावार व उत्पादकता

वर्ष	क्षेत्रफल (लाख है.)	पैदावार (लाख टन)	पैदावार (कि./हे.) (उत्पादकता)
1950-51	973.2	508.2	522
1960-61	1155.8	820.2	710
1970-71	1243.2	1084.2	872
1980-81	1278.4	1763.9	1380
1990-91	227.8.4	1763.9	1380
2000-01	1210.5	1968.1	1626
2004-05	1242.4	2121.5	1707

जनसंख्या में विस्फोटक वृद्धि और दलहनी फसलों की पैदावार में अल्प वृद्धि के कारण इनकी उपलब्धता में भारी कमी आई है। सन् 1951 में इनकी उपलब्धता 22.1 किलो / प्रति वयस्क/ वर्ष थी जो घटकर सन् 2003 में 10.6 कि/वयस्क/वर्ष रह गई है। यह स्थिति पौष्टिकता के हिसाब से बहुत चिंताजनक है जबकि खाद्यान्नों की उपलब्धता में संतोषजनक वृद्धि हुई है।

सारणी 4: सन् 1951 से खाद्यान्नों एवं दालों की उपलब्धता (किलो/वयस्क/वर्ष)

वर्ष	धान्य फसलें	खाद्यान्न	दलहन
1951	122.0	144.1	22.1
1961	145.9	171.1	25.2
1971	152.4	171.1	18.7
1981	152.3	166.0	13.7
1991	171.0	186.2	15.2
2001	141.0	151.9	10.9
2002	166.9	179.7	12.8
2003	148.6	159.2	10.6

3.2 **भारत का विश्व में स्थान:** विश्व में भारत का स्थान दलहन की पैदावार व क्षेत्रफल में प्रथम है जो क्रमशः 37% और 28% का योगदान है। विश्व के चना और अरहर उत्पादन में भारत का योगदान लगभग 75% है।

सारणी 5: विश्व, एशिया एवं भारत में दलहनों को क्षेत्रफल पैदावार व उत्पादकता

दलहनी फसलें	विवरण	विश्व	एशिया	भारत	भारत का योगदान (%)
1. चना	क्षेत्रफल	110.0,	101.4,	86.9,	78.29
	पैदावार	91.1	83.0,	69.7	76.51
	उत्पादकता	821	819	802	–
2. अरहर	क्षेत्रफल	35.2,	31.9,	29.0	82.39
	पैदावार	23.8	21.3	19.5	84.93
	उत्पादकता	677	669	672	–
3. मसूर	क्षेत्रफल	34.1,	24.7,	11.0	32.26
	पैदावार	30.1	20.9	9.0	29.90
	उत्पादकता	882	845	818	–
4. मटर	क्षेत्रफल	60.7,	16.9	7.0	11.53
	पैदावार	113.4	16.7	6.0	5.29
	उत्पादकता	1866	988	857	–
5. कुलदलहन	क्षेत्रफल	683.2,	362.2,	240.7,	25.23
	पैदावार	575.1	271.2	159.0	27.65
	उत्पादकता	842	749	661	–

क्षेत्रफल (लाख हे.), पैदावार (लाख टन), उत्पादकता (कि. हे.)

देश में चना, अरहर, उड़द, मूंग, मसूर, मोठ, कुल्फी, मटर और लाख उगाई जाती है। इनमें से अंतिम चार क्षेत्रीय महत्व की हैं। प्रमुख राज्य जिनमें दलहनी फसलें अधिकता से उगाई जाती है मध्यप्रदेश, राजस्थान, महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश और आंध्र प्रदेश हैं जो मिलकर लगभग 82% पैदावार और 74% क्षेत्रफल का योगदान करते हैं।

सारणी 6: दलहन उगाने वाले भारत के प्रमुख राज्य

दलहनी फसलें	राज्य	क्षेत्रफल (लाख हे.) एवं % योगदान
चना	म. प्र., राजस्थान, उ. प्र., महाराष्ट्र, हरियाणा, कर्नाटक	45(60%)
अरहर	महाराष्ट्र, उ.प्र., म. प्र., कर्नाटक, बिहार, गुजरात	27(78:)
मसूर	उ. प्र., म.प्र., बिहार	12(90%)
मूंग	महाराष्ट्र, राजस्थान, आं. प्र, कर्नाटक, उड़ीसा	22(72%)
उड़द	म. प्र., महाराष्ट्र, आं. प्र., उ. प्र.,राजस्थान	21(72%)
मटर	उ. प्र., म. प्र.,	7 (63%)
लाख	म. प्र, बिहार	8 (92%)
अन्य दलहन	म. प्र., उ. प्र., राजस्थान, महाराष्ट्र, आं. प्र.	177 (74%)

3.3 **विश्व, एशिया और भारत में दलहन की स्थिति**

महत्व के अनुसार विश्व में दलहनों का स्थान धान्य फसलों के बाद दूसरा है। लेकिन क्षेत्रफल व पैदाकार के हिसाब से यह पिछड़ी हुई है। 1989-99 के बाद विश्व में लगभग 4% की वृद्धि हुई है।

सारणी 7: दलहनों के क्षेत्रफल, पैदावार और उत्पादकता में विश्व, एशिया व भारत में वृद्धि दर

दलहनी फसलें	विवरण	1989 के बाद % वृद्धि		
		विश्व	एशिया	भारत
कुल दलहन	पैदावार,	3.8	12.4	14.8
	क्षेत्रफल	4.7	9.4	4.0
	उत्पादकता	0.9	2.9	10.5
चना	पैदावार	20.0	20.6	42.2
	क्षेत्रफल	8.6	8.4	25.4
	उत्पादकता	42.2	25.4	13.6
मसूर	पैदावार	20.1	14.1	8.1
	क्षेत्रफल	1.2	-4.1	17.3
	उत्पादकता	17.6	18.6	-8.2

विश्व में दलहन के उत्पादन में सीमांत वृद्धि हुई है। जबकि भारत में 4% वृद्धि, उत्पादकता में वृद्धि (10.5%) के कारण हुई है। दलहनी फसलवार भारत की स्थिति निम्नवत् है:

(1) **चना :** इसके क्षेत्रफल में भारी कमी आई है। इसका कारण यह है कि जहां भी सिंचाई की सुविधा बढ़ी है, इनका क्षेत्रफल गेहूं में चला गया है। पंजाब, हरियाणा और उत्तर प्रदेश में इसके क्षेत्रफल में कमी आने के बावजूद भी इसकी पैदावार में कमी नहीं आई है जो कि उत्पादकता में लगभग 25% वृद्धि होने के कारण संभव हो सका है।

(2) **अरहर :** इसके क्षेत्रफल और पैदावार दोनों में वृद्धि हुई है। पैदावार में वृद्धि क्षेत्रफल और उत्पादकता में वृद्धि के कारण हुई है। क्षेत्रफल में वृद्धि उत्तर-पश्चिमी देश में शीघ्र पकने वाली प्रजातियों के प्रचलन से हुई है। इसके क्षेत्रफल के भविष्य में बढ़ने की आशा है क्योंकि इसका बाजार भाव अच्छा मिलता है, और इसकी लकड़ी काफी उपयोगी है।

(3) **उड़द व मूंग :** इन दलहनी फसलों की पैदावार और क्षेत्रफल में सबसे अधिक वृद्धि हुई है। पैदावार में वृद्धि क्षेत्रफल में वृद्धि के अतिरिक्त उत्पादकता में वृद्धि से हुई है। इनका क्षेत्रफल उत्तरी भारत में गर्मी की फसल उगाने और दक्षिण भारत में धान के बाद उगाने के कारण हुई है। दोनों परिस्थितियों में शीघ्र पकने वाली जातियों की भूमिका अधिक रही है। सिंचाई की सुविधा बढ़ने पर इनके क्षेत्रफल में और वृद्धि होगी।

(4) **अन्य दलहनी फसलें :** अन्य दलहनी फसलें जैसे – मोठ, कुल्थी, लोबिया, मटर, मसूर और राजमा की उत्पादकता में आशाजनक वृद्धि नहीं हुई है। इनका कुछ क्षेत्रफल अन्य मूल्यवान फसलों ने ले लिया है।

4. दलहनी फसलों की पैदावार में आशातीत वृद्धि न होने के कारण

इन फसलों की पैदावार में गेहूं और धान की तुलना में वृद्धि न होने के निम्न कारण हैं:

4.1 **मौसम का अनुकूल होना :** खरीफ के मौसम में उगाई जाने वाली दलहनी फसलें या तो अतिवृष्टि या अनावृष्टि या कभी कभी दोनों से प्रभावित होती है। रबी के मौसम में उगाई जाने वाली दलहनी फसलें प्रायः वर्षा पर आश्रित होती हैं। अतः इनमें सूखे से क्षति होती है। प्रतिकूल तापमान से भी दलहनी फसलों पर बुरा प्रभाव पड़ता है, उदाहरणार्थ उत्तरी भारत में कम तापमान से अरहर को क्षति पहुंचती है।

4.2 **मिट्टी का अनुकूल न होना :** कमजोर और अनुपयुक्त भूमि में दलहनी फसलें उगाई तो जाती हैं, लेकिन क्षारीय और अम्लीय मिट्टी में इन फसलों को सफलतापूर्वक नहीं उगाया जा सकता है।

4.3 **अधिक पैदावार देने वाले जातियों का अभाव :** यद्यपि दलहनों में उन्नत जातियों का विकास हुआ है लेकिन इनकी उत्पादन-क्षमता गेहूं और धान की जातियों से बहुत कम हैं। इसके अतिरिक्त इनमें कमियां भी पाई जाती है, जैसे अरहर लंबे समय में पकती है और वास्तविक वृद्धि अधिक होती है। लाख में पौष्टिकता की दृष्टि से कमी पाई जाती है।

4.4 **प्रमाणित बीजों की कमी :** अन्य फसलों की भांति दलहनी फसलों की उन्नत जातियों के प्रमाणित बीज किसानों को पर्याप्त मात्रा में नहीं मिलते हैं।

4.5 **फसल उगाने की समुचित तकनीकों का न होना :** किसान अब गेहूं व धान को उन्नत कृषि विधियों

द्वारा उगाने के लिए जागरूक हो गए हैं लेकिन वे दलहनी फसलों को उन्नत विधियों द्वारा नहीं उगाते हैं, बल्कि उगाने में इनको अंतिम स्थान देते हैं। यही कारण है कि उन्नत किस्में अपनी जननक्षमता के अनुसार पैदावार नही दे पाती हैं।

4.6 **उर्वरकों के प्रयोग का अभाव :** पोषक तत्वों में दलहनी फसलों को फॉस्फोरस की अधिक आवश्यकता पड़ती है, लेकिन किसान इसका बहुत कम प्रयोग करते हैं। इनके प्रयोग की विधि भी त्रुटिपूर्ण होती है। इसको बुवाई के समय कूंडों में न डालकर छिटकवां प्रयोग करते हैं।

4.7 **जीवाणु खाद के प्रयोग का आभाव :** दलहन की खेतों में यह सबसे सस्ती लागत है। लेकिन इसका उपयोग किसानों में न के बराबर है। इसका मुख्य कारण है बैक्टीरिया खाद की कुछ जातियों की कमी। किसान इनका उपयोग नहीं कर पाते हैं क्योंकि इन्हें अपनाने की विधि उन्हें मालूम नहीं है।

4.8 **फसल सुरक्षा का अभाव :** दलहनी फसलों में बीमारियों और कीटों से भारी क्षति पहुंचती है। इनमें से अधिकांश बीमारियों और कीटों के रोकथाम के उपाय उपलब्ध नहीं है। जहां ऐसे उपाय उपलब्ध भी हैं, किसान इनका प्रयोग नहीं कर पाते हैं क्योंकि इनको अपनाने में व्यय अधिक होता है।

4.9 **प्रशिक्षण की कमी :** दलहनी फसलों को उगाने की तकनीकों को किसानों और प्रसार कार्यकर्ताओं तक पहुंचाने के लिए प्रशिक्षण की उचित प्रबंध नहीं है।

4.10 **दलहनों के विपणन, वितरण और भंडारण की कमी :** दलहनी फसलों की पैदावार को भंडार में कीटों से भारी क्षति पहुंचती है। इनके सुरक्षित भंडारण का समुचित प्रबंध नहीं है। इसी प्रकार इनके विपणन का भी प्रबंध नहीं है।

4.11 **किसानों को उचित मूल्य का न मिलना :** चूंकि दलहनी फसलों के उगाने में जोखिम अधिक होता है, इनसे मिलने वाली पैदावार अन्य फसलों से कम होती है। किसानों को इनका उचित मूल्य मिलना चाहिए जिसकी सूचना फसल बोने से पहले देनी चाहिए।

5. दलहनों पर शोध-कार्य

दलहन पर शोध कार्य व्यवस्थित रूप से उस समय आरंभ हुआ जब भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद ने 1967 में अखिल भारतीय समन्वित परियोजना प्रांरभ की और सन् 1995 में भारतीय दलहन अनुसंधान संस्थान की स्थापना की। इस संस्थान का प्रमुख उत्तरदायित्व दलहन पर आधारभूत शोध करना और चना, अरहर और अन्य दलहनों की अखिल भारतीय समन्वित परियोजनाओं का समन्वय करना है। अत: दलहन पर अब निम्नलिखित संगठनों द्वारा अनुसंधान किया जाता है:

(1) भारतीय दलहन अनुसंधान संस्थान
(2) राज्यों के कृषि विश्वविद्यालय
(3) राज्यों के कृषि विभाग
(4) भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् की संस्थाएं
(5) राष्ट्रीय पादप आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो
(6) शुष्क व उष्ण क्षेत्र के लिए अंतराष्ट्रीय शोध संस्थान (इक्रीसेट)
(7) लघुकालीन शोध योजनाएं जो कृषि विश्वविद्यालय और अन्य विश्वविद्यालयों द्वारा संपन्न होती हैं।
(8) चुनी हुई बीज उत्पादक संस्थाएं

5.1 **शोध की उपलब्धियां:**

(1) **उन्नतशील जातियां :** विभिन्न दलहनी फसलों की उन्नत जातियों को सारणी 8 में दिया गया है।

सारणी 8 - दलहनी फसलों की उन्नत जातियां

दलहन	उन्नतशील जातियां	पैदावार क्षमता (कि./ हे)	पकने की अवधि (दिनों में)	विशेष गुण
चना	1. एच 208	2000	150-160	सूखे के लिए सहनशील
	2. एच 355	2350	155-160	सिंचित क्षेत्रों के लिए
	3. सी 235	2250	150-160	झुलसा के लिए अवरोधी
	4. जी 130	2300	150-160	सिंचित क्षेत्रों के लिए
	5. वी डी एन 9-3	1800	130-140	शीघ्र पकने वाली

दलहन	उन्नतशील जातियां	पैदावार क्षमता (कि./ हे)	पकने की अवधि (दिनों में)	विशेष गुण
	6. अत्रिगिरी	1700	130-140	शीघ्र पकने वाली
	7. जे जी 315	2000	135-140	उकठा के लिए अवरोधी
	8. जी एन जी 146	1900	150-160	झुलसा के लिए अवरोधी
	9. जे. जी. 74	1800	140-150	पिछैती बुवाई के लिए
	10. एल 144	1800	160-165	काबुली
	11. एल 550	1900	160-160	काबुली, बड़ा दाना
	12. जी 543	2000	150-160	झुलसा के लिए अवरोधी
	13. पूसा 209	2200	150-153	संपूर्ण भारत के लिए
	14. पूसा 212	2000	145-150	संपूर्ण भारत के लिए
	15. राधे	2300	150-160	पिछैती बुवाई के लिए
	16. के 850	2350	150-160	दाना बड़ा, पौधा गढ़ा हुआ
	17. पंतजी 114	2400	150-160	पूर्वी क्षेत्रों के लिए
	18. गौरव	2000	150-160	झुलसा के लिए अवरोधी
	19. फुलेजी 5	2100	140-150	उकठा के लिए अवरोधी
	20. आई सी सी सी 4	2150	135-160	झुलसा के लिए अवरोधी
	21. पूसा 408	2150	140-150	बौनी किस्म
	22. पूसा 413	2000	135-140	उकठा के लिए अवरोधी
	23. पूसा 417	2000	135-140	उकठा के लिए अवरोधी
	24. बी. जी. 256	2400	160-165	संपूर्ण भारत के लिए
	25. बी. जी. 1003	2000	160-165	काबुली
	26. के पीजी 59	200	140-145	पिछैती बुवाई के लिए
अरहर	1. टा. 7	2250	250-280	पौधा गठा हुआ
	2. टा. 17	2000	270-280	पौधा फलने वाला
	3. वी डी एन 1	1750	140-170	उकठा के लिए अवरोधी
	4. बहार	2250	220-240	बांझ रोग अवरोधी
	5. टा. 21	1700	150-160	शीघ्र पकने वाली
	6. ऊ पी ए एस 120	1800	130-140	शीघ्र पकने वाली
	7. प्रभात	1500	110-120	अतिशीघ्र पकने वाली
	8. मानक	1900	120-130	शीघ्र पकने वाली
	9. आई सी पी एल 87	1800	140-160	बार-बार फली तोड़ने के लिए
	10. आई. सी. पी. एल 151	1900	140-160	गढ़ा हुआ पौधा
	11. पूसा 84	2000	150-160	अगैती
	12. पूसा 85	2100	145-150	अगैती
	13. ए एल 15	1800	130-140	अगैती
	14. बी डी एन-1	2000	200-210	मध्यम अवधि
	15. एल आर जी 36	1900	170-180	मध्यम अवधि

दलहन	उन्नतशील जातियां	पैदावार क्षमता (कि./ हे)	पकने की अवधि (दिनों में)	विशेष गुण
	16. सी - 11	2000	200-210	उकठा रोग के लिए
	17. नं. 148	2000	200-210	उकठा रोग के लिए
	18. आई सी. पी एच 8	1800	120-130	संकर जाति
	19. पी पी एच-4	1800	130-140	संकर जाति
	20. को पी एच-1	1700	120-130	संकर जाति
	21. एके एच-1	1800	120-130	संकर जाति
	22. एके एच 2	1800	130-140	संकर जाति
3. मूंग	1. टा. 44	800	60-65	ग्रीष्म ऋतु के लिए
	2. पूसा बैसाखी	1000	55-60	फलियां एक साथ पकती हैं
	3. पी.एस-7	1100	65-70	दाना बड़ा ,पौधा बैंगनी
	4. पी. एच-16	1200	60-70	दक्षिण भारत के लिए
	5. के 851	1200	60-65	ग्रीष्म काल के लिए
	6. एच 8	1100	70-80	सूखे के लिए सहनशील
	7. पंत मूंग-1	1000	65-70	पीला चितेरी रोग अवरोधी
	8. पंत मूंग-2	1200	60-65	पीला चितेरी रोग अवरोधी
	9. एम एल-1	900	90-95	सरकिस्पोरा रोग के लिए
	10. एम. एल-5	1300	80-25	सरकिस्पोरा रोग के लिए अवरोधी
	11. एम. एल-267	1200	70-80	सरकिस्पोरा रोग के लिए अवरोधी
	12. पी डी एम 54	1300	50-60	शरद ऋतु की बुवाई के लिए
	13. पी डी एम 11	1300	50-60	शरद ऋतु की बुवाई के लिए
	14. पूसा 105	1200	50-60	शरद ऋतु की बुवाई के लिए
	15. पूसा विशाल	1400	60-65	बड़े दाने वाली
	16. बसंती	1300	60-70	शरद ऋतु के लिए
4. उड़द	1. टा. 9	1100	80-90	संपूर्ण भारत के लिए
	2. कोपरगाँव	000	80-90	महाराष्ट्र के लिए
	3. ऊ. जी. 218	1500	75-80	चितैरी रोग अवरोधी
	4. सी. ओ 3	750	65-70	तमिलनाडु के लिए
	5. पंत यू. 19	1200	80-85	चितेरी रोग के लिए अव.
	6. पंत यू 30	1250	80-85	चितेरी रोग के लिए अव.
	7. पी डी यू	200	65-75	शरत ऋतु के लिए
	8. टी पी यू	1000	65-75	दहिया रोग अवरोधी
	7. एल वी.जी 17	1250	70-80	दहिया रोग के लिए अवरोधी
5. मटर	1. रचना	2400	130-140	दहिया रोग के लिए अवरोधी
	2. हंस	2100	120-130	बौनी जाति
	3. हरभजन	1000	110-120	बौनी जाति
	4. अपर्णा	2000	110-120	पत्ती रहित, दहिया रोग अवरोधी

दलहन	उन्नतशील जातियां	पैदावार क्षमता (कि./ हे)	पकने की अवधि (दिनों में)	विशेष गुण
	5. पंत पी 5	2200	130-140	दहिया रोग के लिए अवरोधी
	6. जी पी 885	2100	130-140	दहिया रोग के लिए अवरोधी
	7. मालवीया मटर-2	2200	140-150	ऊंची बढ़ने वाली जाति
	8. पूसा प्रभात	2300	140-150	दाने व सब्जी के लिए उत्तम
	9. पूसा पन्ना (बौनी किस्म)	2200	110-120	बौनी जाति
	10. उत्तरा (बौनी किस्म)	2400	120-140	बौनी जाति
	11. शिखा (बौनी किस्म)	2200	130-140	ऊंची बढ़ने वाली जाति
6. मसूर	1. पंत एल 406	1800	145-150	रतुआ रोग के लिए अवरोधी
	2. पंत एल 639	2000	140-145	रतुआ रोग क लिए अवरोधी
	3. पंत एल 234	1500	130-140	बड़े दाने वाली
	4. वी एल-1	1400	140-150	पहाड़ी क्षेत्र के लिए
	5. के 75	2000	130-140	बड़े दाने वाली, मध्य क्षेत्र के लिए
	6. डी पी एल 15	2100	140-150	बड़े दाने वाली, मैदानी क्षेत्र के लिए
	7. डी पी एल 62	2000	130-140	बड़े दाने वाली, मैदानी क्षेत्र केलिए
7. राजमा	1. उदय	2000	125-130	बड़े आकार का लाल चित्तीदारदाना
	2. मालवीय 15	2100	115-120	दाना सफेद
	3. मालवीय 137	2200	115-120	गहरा गुलाबी दाना
	4. अंबर	2400	135-140	विषाणु रोग अवरोधी तथा कम ताप के प्रति सहिष्णुता

(2) उन्नत सस्य विधियां:

(1) प्रत्येक दलहन की बुवाई का समय ज्ञात कर लिया गया है। विलंब से बुवाई करने से पैदावार में कमी आती है और बीमारियों और कीटों का प्रकोप अधिक होता है।

(2) फॉस्फोरस उर्वरकों के प्रयोग से पैदावार बढ़ने के साथ-साथ सूखे को सहन करने की क्षमता बढ़ती है।

(3) एक सिंचाई शाखाएं फूटते समय और दूसरी सिंचाई फली में दाना बनते समय देनी चाहिए।

(4) खरपतवार नष्ट करने के लिए खुरपी से निकाई सबसे अच्छी सिद्ध हुई है।

(5) शीघ्र पकने वाली दलहनी फसलें अन्य फसलों के साथ बोने से प्रति इकाई क्षेत्र से खाद्यान्नों की अधिक पैदावार मिलती है।

(6) 20-25 किलो गंधक प्रति हेक्टेयर की दर से मिट्टी में मिलाकर दलहनों की बुवाई करने में पैदावार में वृद्धि होती है।

(3) फसल सुरक्षा :

(1) प्रत्येक दलहनी फसल में रोग रोघी जातियों का विकास किया जा चुका है जिनको उपर्युक्त सारणी में दर्शाया जा चुका है।

(2) बीज का थिरम (2.5 ग्राम थिरम / 1 किलो बीज) से शोधन करके बुवाई करने से नवजात पौधों में लगने वाली बीमारी पर नियंत्रण किया जा सकता है।

(3) मटर के दहिया रोग के लिए 1लिटर / हेक्टेयर की दर से कैराथान या होस्टाथियान का छिड़काव करने से फसल को सुरक्षित रखा जा सकता है।

(4) फली-वेधक कीट से फसल को बचाने के लिए एन्डोसल्फान का 0-07% की सांद्रता में छिड़काव करना चाहिए।

❑

अकाल एवं सूखा प्रबंधन

④

● डॉ. नवीन कुमार बौहरा *

देश भर के लिए 'अकाल' भयावह चिंता का विषय है। कभी-कभी 'त्रिकाल' अर्थात् चारा-पानी-खाद्य तीनों के अभाव के कारण जनजीवन त्रस्त-ध्वस्त हो जाता है। सूखा-प्रबंधन के अंतर्गत विश्वव्यापी उष्णता के मुक्ति के उपाय, नीली क्रांति के भौतिक-जैविक साधन, गैर-परंपरागत खेती, क्षेत्र-विशेष गत प्राकृतिक वनस्पतियों के संवर्धन एवं वैकल्पिक कृषि के द्वारा अकाल की विभीषिका से बचाव का मार्ग सुझा रहे हैं सुधी लेखक डा. नवीन कुमार बौहरा–

अकाल एवं सूखा जैसी विपत्तियां प्राकृतिक आपदाएं हैं जिन पर मानव का नियंत्रण नही है। अकाल एवं सूखे से न केवल मानव जीवन पर प्रभाव पड़ता है, वरन् इससे प्राकृतिक संसाधनों की कमी भी होती है। राजस्थान की भौगोलिक स्थिति ऐसी है कि यहाँ देश के अन्य प्रांतों की अपेक्षा बहुत कम वर्षा होती है। भारत के पश्चिम भू-भाग में स्थित राजस्थान राज्य में भारत के कुल रेगिस्तानी भाग का 61 प्रतिशत भू-भाग आता है। इस क्षेत्र में न केवल कम एवं अनियमित वर्षा होती है, अपितु चलायमान रेतीले टिब्बे, धूल-भरी आंधियां एवं 50 से.ग्रे. तक तापमान क्षेत्र की भयावहता को और बढ़ा देते हैं। यहाँ प्रायः हर 10 वर्ष में से 4 से 6 वर्ष सूखा एवं अकाल जैसी स्थितियां बनती रहती हैं। यहां पर वर्षा औसतन 100 से 400 मि.मि. तक ही होती है। वर्षा के अनियमित होने से कृषि कार्यो पर प्रभाव पड़ता है। पिछले 54 वर्षो से मात्र आठ वर्षो को छोड़ शेष 46 वर्षों में यह प्रदेश सूखा या अकाल जैसी परिस्थितियों से प्रभावित रहा है। विगत 100 वर्षों में जोध पुर स्टेशन में औसत वर्षा लगभग 370 मि.मि. हुई है जो बहुत ही कम है।

विगत 54 वर्षो में केवल आठ वर्ष अच्छा मौसम रहने से क्षेत्र समय-समय पर अकालग्रस्त रहा है। 1901, 1905, 1918, 1946, 1956, 1957, 1968, 1969, 1974, 1984, 1987 में ऐसे अकाल पड़े हैं। इन सभी में छप्पनियां अकाल अर्थात् 1956 का अकाल जिसे त्रिकाल (अर्थात् चारे, पानी एवं खाद्य तीनों की कमी) कहते हैं, सदी का भीषणतम अकाल माना जाता है। निरंतर पड़ रहे सूखे एवं अकाल ने राजस्थान के निवासियों को और भी सुदृढ़ तथा संयमी एवं सहनशील बना दिया है। यहाँ की रंग-बिरंगी पोशाकों की छटा, निवासियों के चेहरे की मुस्कान, प्राकृतिक संपदा पर निर्भरता आदि ने मानो अकाल और सूखे पर चादर सी डाल दी है। बदलती परिस्थितियों के परिप्रेक्ष्य में सूखा प्रबंधन की आवश्यकता और भी प्रासंगिक होती जा रही है।

राजस्थान में अकाल मुख्यतः तीन प्रकार के होते हैं:

(1) **मौसम-संबंधी अकाल**- जब क्षेत्र-विशेष की औसत वर्षा सामान्य से 5 प्रतिशत या अधिक कम होती है तो उसे अकालग्रस्त क्षेत्र कहा जाता है।

(2) **जल-संबंधी अकाल**- जब मौसम-संबंधी अकाल लंबे समय तक चलता है तो जलीय अकाल की स्थिति हो जाती है जिसमें जल संसाधनों की कमी हो जाती है।

(3) **कृषि अकाल**- इसमें भूमि में नमी तथा वर्षा की कमी या अनियमितता के कारण कृषि कार्य प्रभावित होता है तथा उत्पादकता में कमी आ जाती है।

* प्लॉट नं. 385, गली नं. 10, मिल्कमैन कॉलोनी, पॉल रोड, जोधपुर

अकाल का प्रभाव

अकाल का प्रभाव संपूर्ण परिस्थितियों एवं मुख्यतः गरीब लोगों पर पड़ता है। इससे कृषि-कार्य बुरी तरह प्रभावित होता है तथा भुखमरी, कुपोषण के अलावा तपेदिक एवं अन्य संक्रामक रोगों का खतरा बढ़ जाता है। इससे मानव के साथ-साथ पशुपालन को भी हानि पहुंचती है। लगातार अकाल से लोगों का जैविक एवं सामाजिक जीवन का ढांचा भी तहस-नहस हो जाता है। राजस्थान के गरीब एवं कृषि पर निर्भर लोगों के लिए अकाल कई प्रकार से हानि पहुंचाता है । राजस्थान का शुष्क क्षेत्र अकाल से बुरी तरह प्रभावित होता है। राजस्थान में करीब 76 प्रतिशत कृषि उत्पादन बाजरा का होता है, परंतु औसत उत्पादन में राजस्थान में प्रतिवर्ष उत्पादन करीब 275 कि. ग्रा / हेक्टेयर है, जबकि पश्चिमी राजस्थान का लगभग 325 कि. ग्रा हेक्टेयर प्रतिवर्ष है, जो देश के सकल औसत उत्पाद 450 कि.ग्रा / हेक्टेयर प्रतिवर्ष से बहुत कम है।

सूखा प्रबंधन

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में सूखा प्रबंधन आज की एक महती आवश्यकता हैं। सूखा प्रबंधन में प्रमुख दो मुद्दे मुख्य हैं, अर्थात्

(1) वैश्विक तापमान में वृद्धि (गरमाती धरती)

(2) भूमि उपयोग के प्रतिमानों का अध्ययन)

1. **वैश्विक तापमान वृद्धि:** गरमाती धरती के कारणों में आज ग्रीन हाउस गैस, कार्बन प्रच्छादन, कार्बन बजटिंग एवं कार्बन क्रेडिट कार्ड आदि के साथ अन्य कारक भी जिम्मेवार माने गए हैं। 1998 में जब बिट्रिश अंटार्कटिका सर्वे के वैज्ञानिकों ने अंटार्कटिका की बर्फ के पिघलने का कारण विश्व के बढ़ते तापमान को बताकर चेतावनी दी थी तो उसे नजरअंदाज कर दिया गया था। किंतु अब विशेषज्ञों का मानना है कि पृथ्वी के तापमान में कुछ डिग्री का परिवर्तन मौसम में बहुत बड़ा बदलाव ला सकता है। कार्बन डाइ ऑक्साइड की बढ़ती मात्रा आज खतरनाक होती जा रही है। भारत आज अमेरिका, चीन, रूस, एवं जापान के बाद कार्बन डाइ ऑक्साइड को सर्वाधिक उत्सर्जित करने वाला पांचवां राष्ट्र है। कार्बन डाइ ऑक्साइड के अतिरिक्त मेथेन, नाइट्रस ऑक्साइड एवं क्लोरो फ्लुओरो कार्बन (सी. एफ. सी) इसके प्रमुख कारण हैं। आई.पी.सी. सी. की रिपोर्ट के अनुसार पिछले 50 वर्षों में ग्लोबल वार्मिंग के फलस्वरूप कई चौंकाने वाले तथ्य सामने आए है। गंगोत्री का ग्लेशियर 30 मीटर प्रतिवर्ष पीछे खिसक रहा है। बड़े-बड़े हिमखंड टूट रहे है। समुद्री जल स्तर का ऊंचा होना भी इस खतरे का संकेत दे रहा है, जिससे तटीय आबादी के साथ आम जन को भी भारी हानि भविष्य में हो सकती है। अंतराशासकीय जलवायु परिवर्तन पैनल (आई. पी. पी. सी) के एक अनुमान के अनुसार 1990 की तुलना में धरती का तापमान सन् 2010 तक 2^0 से 5^0 तक बढ़ सकता है।

प्राकृतिक संसाधनों के अतिदोहन के कारण जो पर्यावरणीय समस्याएं उत्पन्न हो रही हैं, उनमें वायु-प्रदूषण, जल प्रदूषण, भूमि का बंजीकरण, रेगिस्तानीकरण, तेजाबी वर्षा तथा सूखा आदि हैं। विश्व के तापक्रम में वृद्धि सबसे भयंकर पर्यावरणीय चुनौतियों में एक है। इसके कारण पिछले 10 हजार वर्षो से स्थिर जलवायु को भयंकर खतरा उत्पन्न हो गया है। 21 वीं शताब्दी में विश्व के तापक्रम में वृद्धि से फसलों के विनाश, पानी के अभाव, समुद्र के जलस्तर में वृद्धि से अनेक गंभीर समस्याएं उत्पन्न होंगी। गरमाती धरती एवं सूखे जैसे परिस्थितियों का सामना मात्र जल एवं भूसंरक्षण तथा वानिकी के विकल्पों द्वारा कार्बन पृथक्करण करके किया जा सकता है।

2. **नीली क्रांति:** मरु क्षेत्र की परिस्थितियों में मृदा एवं नमी का संरक्षण एक अत्यंत दुष्कर कार्य है। अकाल की परिस्थितियों में मरु क्षेत्र में जल संकट एक भयानक आपदा के रूप में आता है। विश्व बैंक तथा संयुक्त राष्ट्र खाद्य एवं कृषि संगठन द्वारा जारी आंकड़ों के अनुसार हर 21 वर्षों में पानी की खपत दुगुनी हो जाती है। इन आंकड़ों के अनुसार अगले कुछ वर्षों में पानी की भारी कमी होगी, तथा

शुष्क क्षेत्रों में पानी की स्थिति पहले से ही कम होने के कारण स्थिति एक भयावह रूप ले सकती है। विश्व बैंक ने चेतावनी दी है कि बीसवीं सदी में जहाँ खनिज तेज के लिए संघर्ष हुआ था वहीं 21 वीं शताब्दी में पानी के लिए विश्वयुद्ध छिड़ जाएगा। जिस प्रकार 1960 के दशक में हरित क्रांति की वजह से कृषि क्षेत्र में बदलाव आया था वैसे ही जल क्षेत्र में बदलाव हेतु नीली क्रांति की जरूरत है। वैज्ञानिक मरुक्षेत्र में वर्षा जल के अधिकाधिक संग्रहण तथा वाष्पोत्सर्जन की दर को कम से कम करने के प्रयास से जुटे हैं। परंपरागत जल-स्रोत टांका, नाड़ी, बावड़ी, आदि के द्वारा मरुक्षेत्र में जल संरक्षण सदियों से किया जा रहा है।

आधुनिक युग में वैज्ञानिक विभिन्न प्रकार की जल संग्रहण पद्धतियों, यथा वलयाकार खड्डे, खाई एवं मेड़, तश्तरी नुमा थावले, गहरी जुताई के साथ साथ बड़ी बड़ी मेड़ें बनाकर एवं पलवार आदि के द्वारा वर्षा जल को अत्यधिक मात्रा में संगृहीत एवं संरक्षित रखने के प्रयास कर रहे हैं। वृक्षारोपण के पश्चात् पलवार के रूप में क्षेत्र में पाए जाने वाले खरपतवारो यथा *कोटेलेरिया बुरहिया एवं लेप्टेडेनिया* आदि के द्वारा वर्षा जल को अधिक समय तक संगृहीत रखने एवं नमी को संचित करने में आशातीत सफलता प्राप्त हुई है।

वास्तव में स्थानीय स्तर पर सूखा प्रबंधन के लिए कुछ अल्पकालिक एवं कुछ दीर्घकालिक योजनाएं बनाने की आवयश्कता है। इन अल्पकालिक योजनाओं में मुख्य मुद्दा मानव एवं पशुपालन के लिए पानी, भोजन, स्वास्थ्य एवं आर्थिक गतिविधियां है। लंबे समय के कार्यक्रमों में भावी पीढ़ी के लिए एक समुचित योजना का क्रियान्वयन आवश्यक है। दीर्घकालीन योजना के लिए जनमानस को सूखे से जुड़ने के लिए तैयार करना, जल-संरक्षण की विधियों को योजनाबद्ध तरीके से जन-भागीदारी के साथ क्रियान्वित करना तथा वैकल्पिक कृषि को बढ़ावा देना प्रमुख है। आज समय की आवश्यकता है कि उपलब्ध जल को मितव्ययिता से काम में लाया जाए तथा जल-संसाधनों एवं वर्षा-जल का संरक्षण किया जाए।

गैर-परंपरागत खेती

सूखा-प्रभावित क्षेत्रों मे वर्षा की अनियमितता के कारण क्षेत्र के किसान हमेशा आंशकित एवं भयभीत रहते हैं। ऐसे क्षेत्रों में गैर-परंपरागत फसलों जैसे सोनमुखी, जोजोबा, तुंबा आदि की खेती द्वारा इस क्षेत्र के किसान न केवल वर्षा की अनियमितता से होने वाले नुकसान से बच सकते है, वरन् उन्हें इससे एक अच्छी आमदनी भी प्राप्त हो सकती है। इन सभी के अतिरिक्त इन गैर-परंपरागत फसलों की खेती से क्षेत्र की परती भूमि में हरियाली भी लाई जा सकती है।

जोजोबा या होहोबा *(साहमोन्डिया चाइनेसिस)*

से तेल निकाला जा सकता है जो दवा उद्योग में, खाद्य के रूप में, स्नेहक तेल के रूप में तथा आग प्रतिरोधी पदार्थ आदि के रूप में प्रयुक्त होता है। यह कम वर्षा में भी प्राप्त हो सकता है। इसी प्रकार सोनामुखी *(कैसिया अंगुस्टिफोलिया)* में पाया जाने वाला सेनोसाइड 'ए व बी' ग्लूकोसाइड रसायन विभिन्न दवाओं में प्रयुक्त होते हैं। इस फसल को वर्ष में दो बार काटा जा सकता है तथा इसकी पत्तियों का उपयोग दवा उद्योग में होता है।

तुंबा (सिट्रलस कोलो सिन्थिस) भी कम पानी में उगने वाला एक रेंगने वाला शाकीय पादप है। इसके फलों में कोलोसिन्थिन ग्लुकोसाइड होता है, जबकि बीजों में 20 प्रतिशत तेल एवं 11 प्रतिशत प्रोटीन होता है। इसका भी चिकित्सा में उपयोग होता है। इसका तेल साबुन एवं मोमबत्ती उद्योग में भी प्रयुक्त होता है। इस प्रकार की कम पानी में उगने वाली व्यापारिक फसलें अकाल में क्षेत्र के लोगों के लिए वरदान सिद्ध हो सकती हैं। इसके अतिरिक्त कम पानी एवं कम समय में पकने वाली फसलें भी लाभप्रद रहती है।

प्राकृतिक वनस्पतियाँ

मरु क्षेत्र में पाई जाने वाली प्राकृतिक वनस्पतियाँ क्षेत्र के लोगों द्वारा अतिरिक्त खाद्य के रूप में वर्षो से उपयोग में लाई जा रही है। खेजडी, केर, बेर, फोग, जाल, बबूल, जंगल जलेबी, अडूसा, खारको आदि पौधों के फल, फलियां एवं अन्य पदार्थ खाद्य के रूप में प्रयुक्त होते हैं। सहजन की फली सब्जी के रूप में तथा बेल का

शर्बत शीतल पेय बनाने में प्रयुक्त होता है। इन वनस्पतियों का उपयोग न केवल खाद्य के रूप में वरन् व्यापारिक उत्पाद बनाने एवं स्थानीय औषधि के रूप में किया जा सकता है। इन पदार्थों में पौष्टिक तत्व होते हैं तथा इन वनस्पतियों की पत्तियाँ चारे के रूप में भी प्रयुक्त की जाती है। खेजड़ी की पत्तियाँ जिन्हें लूंग कहते है, तथा बेर की पत्तियां जिन्हें पाला कहते है, पौष्टिक चारे के रूप में प्रयुक्त होती हैं। इस प्रकार स्थानीय रूप में उपलब्ध ये वनस्पतियां बहुत उपयोगी हैं तथा महत्वपूर्ण भी सोनामुखी, गुग्गुल, कौंच, अश्वगंधा, जीवंती, गोखरू, मेंहदी, तुलसी, शंखपुष्पी जैसे औषधीय पादप इसी क्षेत्र में मिलते हैं।

वैकल्पिक कृषि: सूखा प्रभावित क्षेत्रों में घास उगाकर न केवल पशुओं के लिए चारे की समस्या को हल किया जा सकता है, वरन् अकाल में भी क्षेत्र को हरा-भरा बनाया जा सकता है। मरुक्षेत्रों मे सेवण, ग्रामणा, दएदार, धामन, मोडा, करक, खरड़ा घास आदि लगाई जा सकती हैं। इन घासों की कई उन्नत किस्में भी उपलब्ध है। ये घासें भूमि को बांधे रखने में भी सहायक हैं। कृषि वानिकी के द्वारा भी इस क्षेत्र में क्रांति लाई जा सकती है।

वास्तव में सूखा-प्रभावित क्षेत्रों में स्थानीय प्रजातियों के संरक्षण एवं उपयोग, कृषि वानिकी, वैकल्पिक कृषि के प्रयोग से, गैर-परंपरागत नकदी फसलों की खेती कर अकाल में भी हरियाली तथा कमाई अर्जित की जा सकती है। राजस्थान में खेजड़ली में वृक्षों की खातिर बलिदान की कहानी संपूर्ण विश्व में प्रसिद्ध है। आज भी आवश्यकता है कि प्राकृतिक आपदाओं से न घबराकर उनका सामना स्थानीय स्त्रोतों, संसाधनों एवं तकनीकों से किया जाए।

मध्य प्रदेश की विषम परिस्थितियों के बारे में सुनकर कई लोग यहाँ पर मानव-जीवन के अस्तित्व होने की कल्पना भी नही कर सकते हैं। वही मध्य प्रदेश आज नए-नए वैज्ञानिक प्रयासों एवं नीली क्रांति के द्वारा इस क्षेत्र को हरा-भरा बनाने में प्रयासरत है। अकाल-राहत कार्यो में पिछले 50 वर्षों तक लगभग चार हजार करोड़ रुपए से अधिक राशि खर्च हो चुकी है। इस क्षेत्र में संसाधनों की कमी नहीं है। आज के परिप्रेक्ष्य में दीर्घकालीन सूखा प्रबंघन की सतत आवश्यकता है। आने वाले समय के लिए सूखा-प्रबंधन जन-भागीदारी का रूप ले लेगा। तभी इस प्रदेश के निवासियों के जीवन में खुशहाली आ सकती है।

हर वर्ष करोडों रुपए अकाल-राहत में लगाने की जगह एक दीर्घकालीन सूखा प्रबंधन नीति बनाने एवं उस पर क्रियान्वयन करने की आज एक महती आवश्यकता है। ❑

कैसे होता है मानव में लिंग निर्धारण?

मानव शरीर की सामान्य कोशिकाओं में 46 गुणसूत्र (क्रोमोसोम) होते हैं। 44 गुणसूत्र तो सामान्य होते हैं, जिन्हें अलिंग सूत्र (आटोसोम) कहते हैं, और दो गुणसूत्र लिंग गुणसूत्र (सेक्स-क्रोमोसोम) होते हैं। स्त्रियों में ये दोनों एक से होते हैं और एक्स (x) गुणसुत्र कहलाते हैं। पुरुष में ये असमान होते हैं- एक (x) गुणसूत्र कहलाता है तथा दूसरा y गुणसूत्र। अतएव पुरुष में 44+x+y क्रोमोसोम होते हैं तथा तथा स्त्री में 44+x+x। नर से उत्पन्न जनन कोशिकाओं अर्थात् 'शुक्राणुओं' में सामान्य गुणसूत्र (46) के आधे होते है, अर्थात् कुछ में 22+x तथा अन्य में 22+y। स्त्री से उत्पन्न अंडाणु एक ही प्रकार के अर्थात 22+x वाले होते हैं। दूसरे शब्दों में, शुक्राणु दो प्रकार के होते हैं अर्थात् ऐक्स (x) वाले तथा वाई (y) वाले। किंतु अंडाणु x वाले ही होते हैं। यदि ऐक्स वाले अंडाणु का निषेचन ऐक्स वाले शुक्राणु ने किया तो x+x वाली संतति पुत्री पैदा होती है। यदि x वाले अंडाणु का निषेचन Y वाले शुक्राणु ने किया तो x+y वाली संतति पुत्र होती है। अत: मानव में लिंग निर्धारण x और y गुणसूत्र ही करते हैं।

5

कीटभक्षी पौधेः कुदरत के अजूबे

● डॉ. दीपक कोहली *

प्रकृति में कुछ ऐसे भी पौधे होते हैं जो कीटों को खाते हैं। इन्हें मांसाहारी भी कहा जाता है। ये कीटभक्षी अथवा मांसाहारी पौधे कीड़े-मकाड़ों का किस प्रकार शिकार करते हैं इस बारे में प्रस्तुत लेख में जानकारी दी गई है।

क्या आपने कभी मांसाहारी पौधे के बारे में सुना है? जी हां, यह सच है कि पादप-समूह में कुछ जातियां ऐसी भी हैं जो कि मांसाहारी या कीटभक्षी कही जाती हैं, क्योंकि इन जातियों के पौधे कीट-पतंगों का भक्षण करते हैं। ये पौध यों तो अन्य पौधों की तरह अपना भोजन सूर्य के प्रकाश, हवा और पानी की सहायता से स्वयं निर्मित करते हैं, किंतु कुछ आवश्यक पोषक तत्वों, विशेषतः नाइट्रोजन की पूर्ति ये विभिन्न कीटों के द्वारा करते हैं।

मांसाहारी पौधों का सर्वप्रथम परिचय 1760 में आर्थर डॉब नाम के एक अमरीकी वैज्ञानिक ने कराया था। इसके पश्चात् सन् 1768 में स्वीडेन के प्रख्यात वैज्ञानिक लीनियस ने मांसाहारी पौधों पर कुछ और शोध-कार्य किया। वैज्ञानिकों के अनुसार संसार-भर में मांसाहारी या कीटभक्षी पौधों की लगभग 600 जातियां हैं जो मुख्यतः अमेरिका, आस्ट्रेलिया, मलेशिया, दक्षिण अफ्रीका, जापान और भारत में पाई जाती हैं। इन सभी की शिकार करने की विधियां एक दूसरे से भिन्न होती हैं। आइए कुछ प्रमुख कीटभक्षी पौधों और उनकी कीटों को पकड़ने की क्रियाविधि के बारे में जानें।

सर्वप्रथम हम आपको **नेपेन्थीज** या **घटपर्णी** नामक पौधे के बारे में बताते हैं। इसे 'पिचर-प्लांट' अथवा 'कलश-पादप' भी कहा जाता है। इस पौधे के पत्ते लंबे होते हैं जो मुड़कर एक लंबे व पतले कलश के आकार में बदल जाते हैं। कलश का ऊपरी भाग ढक्कन जैसा होता है। ये कलश बहुधा रंग-बिरंगे तथा चटकीले-भड़कीले रंग के होते हैं जिसके कारण कीड़े-मकोड़े इस पौधे की ओर आकर्षित होते हैं। ढक्कनदार खुले कलश का मुंह बहुत ही चिकना और फिसलने वाला होता है। जैसे ही कोई कीट इस पर आकर बैठता है, वह कलश के अंदर गिर जाता है। कलश का एक तिहाई भाग एक विशेष प्रकार के पाचक-तरल से भरा रहता है। कलश के अंदर गिरा हुआ कीट इस पाचक-तरल से, तमाम कोशिशों के बाद भी, आजाद नहीं हो पाता है। फिर पाचक तरल कीटों का पाचन करता है और पौधा इन कीटों से प्राप्त पदार्थों को अवशोषित कर लेता है। भारत में नेपेन्थीज नामक यह मांसाहारी पौधा असम के जंगलों में पाया जाता है। भारत के अलावा यह पौधा अमेरिका तथा आस्ट्रेलिया के दलदली स्थानों पर भी पाया जाता है।

कीटभक्षी पौधों में अत्यंत आश्चर्यजनक एक और पौधा है जिसका नाम है **'वीनस फ्लाई ट्रैप'**। यह पौधा विश्व में बहुत कम स्थानों पर उगता है और साधारणतया अमरीका के उत्तर तथा दक्षिणी कैलिफोर्निया के दलदली स्थानों के किनारे फलता-फूलता है। छोटे आकार का यह पौधा देखने में अन्य साधारण पौधों जैसा ही दीखता है। किंतु शिकार पकड़ने में अत्यंत विचित्र तथा अद्‌वितीय होता है। इस पौधे के पत्ते गुर्दे के आकार के अथवा गोल होते हैं जो कि लोबस (पालि) में बंटे होते हैं तथा इन पोलियों को जोड़ती है पत्ती की मध्य शिरा। इस प्रकार इस पौधे की पत्तियां कब्जेदार होती हैं। पत्तियों की पालि के बाहरी किनारे कांटेदार होते हैं। जैसे ही कोई कीड़ा पत्ती में आकर बैठता है, एक-दो सेकंड के अंदर ही पत्ती के दोनों लोबस अंदर की ओर मुड़कर दोनों तरफ के कांटों को एक दूसरे से गूंथकर एक जिप लगे बटुए के समान बना देते हैं। और शिकार बटुए के अंदर कैद हो जाता है। पत्तों के आंतरिक भाग में स्थिर ग्रंथियां पाचक तरल को स्रवित कर शिकार का भली-भांति पाचन एवं अवशोषण कर लेती है। पत्ते कुछ समय पश्चात अपने आप खुल जाते हैं और हमेशा की तरह अगले शिकार की प्रतीक्षा करते हैं। प्रक्रिया पूरी होने में शिकार के आकार के अनुसार 8 से 20 दिन लग जाते हैं।

ड्रॉसेरा या सनड्यू भी एक विशेष प्रकार का कीटभक्षी पौधा है, जिसकी पत्तियां चम्मच के आकार की होती हैं जो पिन जैसी छोटी-छोटी रोमिल ग्रंथियों से आच्छादित रहती हैं एक पत्ती पर इन ग्रंथियों की संख्या लगभग दो सौ तक होती है, जिन्हें 'स्पशक' कहा जाता है। प्रत्येक स्पर्शक अपने सिर पर गाढ़े, चिपचिपे पदार्थों का स्रवण करता है। यह चिपचिपा पदार्थ सूर्य के प्रकाश में ओस की बूंदों की भांति चमकता है। इस विशेषता के कारण ही इस पौधे को 'सनड्यू' नाम से जाना जाता है। कीट-पतंगे इस पदार्थ को मधु समझकर आकर्षित होते हैं। जब कोई कीट इस पदार्थ के संपर्क में आता है तो स्पर्शक और पत्ती मुड़कर उस कीट को बंद कर लेते हैं। तत्पश्चात्, पाचक एंजाइम कीटों के प्रोटीन को पचाकर नाइट्रोजन-युक्त यौगिकों में परिवर्तित कर देते हैं, जिसे पौधा अवशोषित कर लेता है। एक सनड्यू पौधा एक महीने में औसतन 4-5 कीटों को पकड़ता हैं जिसमें मुख्यतः मक्खियां और चींटियां होती हैं।

क्या कभी कोई सोचता है कि किसी शांत तालाब में उगने वाला एक छोटा सा पौधा मांसाहारी हो सकता है ? जी हां, होता है। इस पौधे का नाम है **'ब्लैडरवर्ट'** अथवा **'यूट्रिक्युलेरिया'**। जलीय प्रकृति वाले ये पौधे जड़-रहित और स्वतंत्रप्लावी होते हैं। इन पौधों के तनों पर छोटी-छोटी थैलीनुमा रचनाएं होती हैं जिन्हें 'ब्लैडर्स' कहा जाता है, जिनके द्वारा ये सूक्ष्म-जलीय जीवों को पकड़ते हैं। इन्हीं रचनाओं की उपस्थिति के कारण ये ब्लैडरवर्ट्स कहलाते हैं। प्रत्येक ब्लैडर का व्यास 2-4 मिलीमीटर होता है। ब्लैडर के मुख पर एक छोटा सा छिद्र होता है। जैसे ही कोई जलीय कीट छिद्र तक आ जाता है तो वाल्व खुल जाता है और कीट ब्लैडर में बंद हो जाता है। ब्लैडर की भित्ति पर अनेक पाचक ग्रंथियां उपस्थित होती हैं जिनसे पाचक एन्जाइमों का स्रवण होता है जो सूक्ष्मजीव को पचाने का कार्य करते हैं।

एक अन्य प्रकार का कीटभक्षी पौधा **'बटरवर्ट'** होता है। इसकी पत्तियां मक्खन की तरह दिखाई देती हैं इसलिए, इसका नाम बटरवर्ट पड़ा है। बटरवर्ट दलदली जलवायु में उगते हैं। इनकी पत्तियों पर दो प्रकार की ग्रंथियां पाई जाती हैं। पहले प्रकार की ग्रथियां छोटे-छोटे रोम के रूप में होती हैं जो अपने स्वतंत्र सिरों पर म्यूसिलेज का स्रवण करती है, जिससे पत्ती पर बैठते ही कीट चिपक जाते हैं और पुनः उस पकड़ से निकलने में असमर्थ हो जाते हैं। कीट की गति के कारण दूसरे प्रकार की ग्रंथियां सक्रिय होती हैं जो एक ऐसे अम्लीय और एन्जाइम युक्त पदार्थ का स्रवण करती है जिसके द्वारा कीट का पाचन होता है। इस तरह, पौधे द्वारा कीट का अवशोषण कर लिया जाता है। कीट के अनअवशोषित भाग धीरे-धीरे हवा में उड़ जाते हैं।

मासांहारी पौधे सदा से ही मानव के लिए जिज्ञासा का विषय रहे हैं। इन पौधों को लेकर कुछ भ्रंतियां भी है। जैसे, कई विज्ञान-कथाओं, उपन्यासों, कहानियों, फिल्मों में इन पौधों को 'नरभक्षी' के रूप में दर्शाया जाता है जो सर्वथा निराधार है। इन पौधों में से कोई भी आकार में एक मीटर से बड़ा नही होता है, और इसी तथ्य से इनके नरभक्षी होने की संभावनाएं समाप्त हो जाती हैं। सभी कीटभक्षी पौधे नाइट्रोजन की पूर्ति के लिए मुख्यतः कीटों पर ही निर्भर रहते हैं। यद्यपि इन पौधों की कुछ जातियाँ जो आकार में बड़ी होती हैं, कभी-कभी कुछ छोटे मेंढक या चूहे को भी शिकार बना लेती हैं।

आज, अन्य दूसरे महत्वपूर्ण जंगली पौधों के साथ-साथ कीटभक्षी पौधों का सुंदर संसार भी नहीं बच पाया है। फलों के व्यवसायों और साज-सज्जा हेतु इन पौधों का बड़ी मात्रा में दोहन किया जा रहा है, जिससे इनकी संख्या लगातार कम हो रही है। यहां तक कि इन पौधों की कुछ

* 5/104, विपुल खंड, गोमती नगर, लखनऊ (उ.प्र.), फोन-0522/2303520.

जातियां विलुप्त होने के कगार पर हैं। अगर यही हाल रहा तो वह दिन दूर नहीं जब ये पौधें, जो कि वैसे ही सीमित हैं, केवल सुनने-सुनाने भर को रह जाएंगे। विश्व के विभिन्न स्थानों पर वनस्पति-विज्ञानी इन प्रजातियों की संकर किस्में (हाइब्रिड) तैयार करने में जुटे हैं। किंतु यह समस्त मानव-समाज की जिम्मेवारी है कि इन पौधों के प्राकृतिक आवास को नष्ट होने से बचाएं और इन अद्भुत जातियों का इतना भी दोहन न करें कि ये इस पृथ्वी से समाप्त ही हो जाएं। ❑

मंगल ग्रह पर भी मौजूद है बर्फ

मंगल ग्रह पर भारी मात्रा में बर्फ के मौजूद होने के संकेत मिले हैं। इस ग्रह की कक्षा का चक्कर लगाने वाले यान के जरिए इसका पता चला है। वैज्ञानिकों के अनुसार मंगल ग्रह के दक्षिणी ध्रुव पर भारी मात्रा में बर्फ मौजूद है। अगर यह पूरी तरह पिघल जाए तो पूरा मंगल ग्रह पानी से लबालब हो जाएगा। यहां का जलस्तर 36 फुट ऊंचा हो जाएगा।

बर्फ की परत और घनत्व को मापने के लिए नासा और इटालियन स्पेस एजेन्सी द्वारा संयुक्त रूप से तैयार किए गए रेडार का इस्तेमाल किया गया। जर्नल 'साइंस' में इस बाबत छपे नतीजों के मुताबिक, बर्फ की मोटाई 2.3 मील आंकी गई है। कहा गया है कि इसमें सफेद जमे हुए कार्बन डाइआक्साइड की भी कुछ मात्रा हो सकती हैं जबकि 90 प्रतिशत जमे पानी में कुछ धूल-कण भी मौजूद हो सकते हैं।

बाप बनने की हसरत पर पानी फेर सकता है गर्म पानी

सैन फ्रांसिस्को में यूनिवर्सिटी ऑफ कैलिफोर्निया के डॉ. पॉल जे ट्यूरेक का कहना है कि अगर कोई पिता बनना चाहता है तो उसे गर्म पानी से नहाने के बारे में सोचना भी नहीं चाहिए। एक नए अनुसंधान के मुताबिक, गर्म पानी के टब में डुबकी लगाने वाले पुरुषों की प्रजनन क्षमता में कमी आ जाती है। अनुसंधानकर्ताओं ने कई पुरुषों पर अध्ययन करके इस बात की जानकारी दी है।

टाइटन पर मौजूद हैं समुद्र

नासा के स्पेसक्राफ्ट कैसिनी से इस बात के सबूत मिले हैं कि शनि ग्रह के चंद्रमा टाइटन पर विशाल समुद्र मौजूद हैं। संभावना बताई जा रही है कि टाइटन के उत्तरी ध्रुव पर स्थित ये समुद्र लिक्विड मेथेन और एथेन से भरे हैं। स्पेसक्राफ्ट द्वारा भेजे गए चित्रों के मुताबिक इन समुद्रों में से एक रूस और ईरान के बीच मौजूद कैस्पियन सागर से थोड़ा छोटा है। इसका आकार कम से कम एक लाख वर्ग किलोमीटर है।

कैसिनी के डेटा पर काम कर रहे ऐरिजोना विश्वविद्यालय के वैज्ञानिक जोनाथन लुनाइन का कहना है कि टाइटन पर समुद्र होने की परिकल्पना हम बहुत पहले कर चुके हैं। लेकिन अब हमारे पास कई ऐसे संकेत हैं, जिनसे वहां समुद्रो के वजूद का पता चलता है। ये समुद्र टाइटन पर पाई गई झीलों से काफी बड़े हैं। लुनाइन के मुताबिक अभी इस बात के सबूत नहीं मिले हैं कि ये समुद्र द्रव युक्त हैं। लेकिन उनके आकार और अन्य लक्षणों की वजह से द्रव की मौजूदगी के संकेत मिले हैं। उन्होंने बताया कि ये द्रव मेथेन या एथेन हो सकते हैं। मेथेन प्राकृतिक गैस का प्रमुख घटक है। टाइटन पर झीलों और समुद्र का पता लगाना कैसिनी मिशन का खास मकसद रहा था। कैसिनी क्राफ्ट वर्ष 2004 में शनि ग्रह पर उतारा गया था।

1606 HRD/2008—5A

(6)

हृदय रोगों का बढ़ता कहर

● डॉ. जे. एल. अग्रवाल *

मानव को अपने जीवन काल में भांति-भांति के रोगों का सामना करना पड़ता है। परंतु इनमें कुछ रोग ऐसे भी होते हैं जो वास्तव में बड़े घातक होते हैं, जैसे- हृदय रोग, कैंसर, एड्स, मधुमेह आदि। प्रस्तुत लेख का विषय हृदय रोग और उससे संबंधित रोगों से है। यदि मानव इनमें से किसी एक से भी ग्रस्त हो जाए तो ईश्वर ही उसका मालिक है। कभी यह प्रौढ़ावस्था और वृद्धावस्था का रोग समझा जाता था परंतु आज स्थिति बदल चुकी है। अब यह रोग सभी आयु वर्ग में व्याप्त है। विद्वान लेखक ने अपनी इस छोटी सी रचना में हृदय रोग के विभिन्न कारणों पर व्यापक जानकारी प्रदान की हैं।

हृदय रोग, हृदय शूल (ऐन्जाइना) या, दिल का दौरा (हार्ट अटैक) विश्व में मौत का मुख्य कारण है। भारत में संक्रामक रोगों के बाद यह मृत्यु का दूसरा प्रमुख कारण है। देश में तेजी से इन रोगों का प्रकोप बढ़ रहा है। चार दशक पूर्व जब मैं मेडिकल छात्र था तो मुझे पढ़ाया गया था कि हृदय-धमनी रोग पश्चिमी देशों और अमीरों के मुख्यत: प्रौढ़ावस्था, वृद्धावस्था के रोग हैं। पर गत दशकों में तस्वीर बिल्कुल बदल गई है। देश में यह रोग अब सभी आयु वर्ग में है। गरीब-अमीर का भेद समाप्त हो गया है। साथ ही अब यह रोग अपेक्षाकृत कम आयु में भी होने लगे हैं। 25 से 30 वर्ष आयु में भी हृद् शूल, हार्ट अटैक अब सामान्य हैं। हृदय रोग के बढ़ते कहर ने चिकित्सकों, वैज्ञानिकों को सोचने पर विवश कर दिया है कि भारत में इन रोगों का प्रकोप क्यों बढ़ रहा है। अध्ययनों से यह भी ज्ञात हुआ है कि प्रवासी भारतीयों में भी इन रोगों का प्रकोप उन देशों के मूल निवासियों से 3 से 5 गुना ज्यादा है, और रोग अपेक्षाकृत कम आयु में और ज्यादा गंभीर रूप में होता है। इसमें पहले दौरे (अटैक) में मौत की संभावना ज्यादा होती है, एक साल में दूसरे दौरे (अटैक) की संभावना भी ज्यादा रहती है।

वैज्ञानिकों के अनुसार भारत तथा दक्षिण-पूर्व एशिया के अन्य देशों में हृदय रोगों के बढ़ते प्रकोप का प्रमुख कारण 'असामान्य जीन' का मौजूद होना है। इस जीन 'थ्रिफ्टी जीन' की मौजूदगी के कारण व्यक्ति में हृदय रोग का खतरा बढ़ जाता है। युगों से भोजन की कमी में रहने में अभ्यस्त होने के कारण शरीर में इस जीन का निर्माण हुआ। कुछ समय पूर्व तक शायद यह जीन निष्क्रिय, सुप्तावस्था में थी। पर आधुनिक जीवन में बदलते खानपान, निष्क्रियता, तनाव, दुर्व्यसन, प्रदूषण इत्यादि से अंत:क्रिया के कारण यह जीन सक्रिय होकर अपना रौद्र रूप स्पष्ट करने लगी, जिसके कारण हृदय रोगों का प्रकोप तेजी से बढ़ने लगा है।

आधुनिक जीवन में अतिव्यस्तता, भागदौड़, महत्वाकांक्षा, प्रतिस्पर्धा, प्रदूषण, असुरक्षा की भावना, तनाव इत्यादि कारणों से जीवन कृत्रिम और असहज हो गया है। ज्यादातर व्यक्ति दोहरा जीवन व्यतीत कर रहे हैं, जिसके कारण

* प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, काय विज्ञान, राजकीय मेडिकल कॉलेज, कांगड़ा (हि.प्र.)-176001

1606 HRD/2008—5B

मोटापा, अनिद्रा, उच्च रक्त चाप, मधुमेह, हृदय रोगों, कैंसर, मनोदैहिक रोगों (अपच, एसीडिटी , एलर्जी), मनोरोगों इत्यादि का प्रकोप बढ़ रहा है।

विश्व भर में, विशेषकर अपने देश में, हृदय रोग के बढ़ते प्रकोप से सभी चिंतित हैं। बढ़ती संपन्नता, तत्काल भोजन (फास्ट फूड) के बढ़ते सेवन, बढ़ती भौतिक सुख-सुविधाएं इत्यादि के कारण लोगों का वजन बढ़ रहा है। मोटे लोगों की संख्या तेजी से बढ़ रही है। मोटापा अभिशाप है। मोटे लोगों में अनेक रोगों तथा हृदय रोगों का खतरा बढ़ जाता है।

भौतिक सुख-सुविधाओं, मोटर वाहनों इत्यादि के कारण अब लोग श्रम कम करते हैं। सभी कार्य मशीनों, कंप्यूटर से होने लगे हैं। निष्क्रिय, आलसी जीवन व्यतीत करने, व्यायाम न करने से हृदय रोग सहित अनेक रोगों का खतरा बढ़ जाता है। जरूरत से ज्यादा वसा, नमक, विशुद्ध शर्करा (चीनी, गुड़, ग्लूकोज) सेवन करने से भी हृदय रोगों सहित अनेक रोगों का खतरा बढ़ जाता है।

आधुनिक युवा अति स्वार्थी और महत्वाकांक्षी हो गए हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि इनके पास समय का अभाव है। ये लोग कथित आराम करने, विश्रांति के लिए भी जो कार्य करते हैं, उसका भी कोई निश्चित उद्देश्य होता है। समाचार पत्र या पत्रिका पढ़ते हैं तो विश्रांति के लिए नहीं बल्कि अपनी जानकारी अद्यतन रखने के लिए। ये फिल्म देखते हैं, या पुस्तक पढ़ते है, तो इस दौरान भी पूर्णतया चिंता या तनाव मुक्त नहीं रहते, बल्कि उनका मन अपने कार्य-निष्पादन, स्वार्थ-साधन, संबंध बनाने तथा इसके परिणाम पर लगा रहता है। मनोवैज्ञानिकों के अनुसार दिखावटी और उद्देश्यपूर्ण विश्राम भी कार्य सदृश होता है। इस समय भी वही हालत होती है – मन कहीं-तन कहीं।

आधुनिक युग में सिगरेट, बीड़ी, गुटखा, शराब, नशीले पदार्थों (कोकेन, हेरोइन, गांजा, चरस इत्यादि) का सेवन आधुनिक होने के मापदंड बन गए हैं। इनके सेवन से तनाव घटता नहीं बल्कि बढ़ता है। साथ ही ये शारीरिक, मानसिक स्वास्थ्य के लिए हानिप्रद होते हैं।

बच्चे, युवा यहां तक कि वयस्क अब घर के पौष्टिक भोजन के स्थान पर बाजार के फास्ट फूड, ठंडे पेय इत्यादि ज्यादा पसंद करते हैं। इनको जंक फूड (कबाड़ भोजन) कहा जाता है। इनमें वसा, नमक, चीनी की भरमार होती है, और स्वास्थ्यवर्धक पोषक तत्वों – प्रोटीन, विटामिन, रेशों, खनिज लवणों, प्रति-ऑक्सीकरकों की कमी। इनके ज्यादा मात्रा में सेवन से मोटापा एवं अन्य रोगों का खतरा बढ़ जाता है।

हृदय-धमनी रोगों से बचाव

हृदय रोगों का कहर देश में बढ़कर महाभारी का रूप ले रहा है। भोजन, संतुलित और पर्याप्त मात्रा में करें। भोजन में वसा, नमक, शुद्ध शर्करा (चीनी, मिठाई) का सेवन सीमित मात्रा में करें। घर में तैयार पौष्टिक भोजन करना चाहिए। फास्ट फूड, ठंडे पेय, पैकेट मे मिलने वाले खाद्य पदार्थों, का सेवन यदा-कदा सीमित मात्रा में ही करना चाहिए। फलों, सब्जियों, साबुत दालों, चोकर सहित आटे की डबल रोटी (ब्राउन ब्रेड), चपाती, मोटे अनाजों का सेवन पर्याप्त मात्रा में करना चाहिए। यदि मांसाहारी हैं तो प्रतिदिन 100 ग्राम से ज्यादा गोश्त चिकन और सप्ताह में तीन से ज्यादा अंडों का सेवन न करें। गोश्त, चिकन के स्थान पर मछली का सेवन ज्यादा बेहतर है। दूध मलाई हटा कर या 'मखनिया (स्किम्ड)' दूध और इसी से तैयार दुग्ध-पदार्थों (दही, पनीर) का सेवन करना चाहिए।

डिब्बे, बोतल, पैकेट में मिलने वाले नमकीन, सॉस, जैम, बिस्कुट, चटनी, चिप्स, नमकीन, तले आटे की डबल रोटी इत्यादि का सेवन यदा कदा सीमित मात्रा में करना चाहिए।

वजन अपनी लंबाई, काठी के अनुसार मानक के आस-पास नियंत्रित करना चाहिए। यदि ज्यादा है तो भोजन में वसा कैलोरी की मात्रा कम करना चाहिए। नियमित व्यायाम करना चाहिए और सक्रिय रहें, आलस्य छोड़े, गृह कार्य एवं अन्य कार्यो में सक्रिय हों। 'आराम-हराम है' जीवन का सिद्धांत बनाएं। आराम पूर्णत: तनाव मुक्त होना चाहिए।

मनपसंद व्यायाम 30 से 40 मिनट प्रतिदिन करना चाहिए। यदि रोजना समय नहीं मिलता तो सप्ताह में 4 दिन व्यायाम अवश्य करना चाहिए। व्यायाम पूर्णत: तनाव मुक्त होकर करना चाहिए। मनपसंद खेलों में भागीदारी करें। सुबह शुद्ध वातावरण में टहलना चाहिए, जिससे शरीर को ताजगी महसूस हो। ऐसा करने से तनाव भी कम होगा।

तंबाकू, गुटखा, सिगरेट, बीड़ी का सेवन नहीं करना चाहिए। शराब एवं अन्य नशीले पदार्थो का सेवन नहीं करना चाहिए। मजबूरी होने पर शराब का सेवन यदाकदा, सीमित मात्रा में (1 से 2 पेग) किया जा सकता है।

नियमित योग व प्राणायाम का अभ्यास करना चाहिए। यह शारीरिक, मानसिक स्वास्थ्य के लिए लाभप्रद है। इससे मानसिक संतुलन होता है, मन में समाई कुंठाएं, तनाव, चिंता दूर होती जाती हैं।

तनाव, चिंता दूर करने के लिए नकारात्मक विचारों -घृणा, क्रोध, जलन, अहंकार, ईर्ष्या इत्यादि को दूर करना चाहिए और मन में सकारात्मक विचार, प्रेम, दयालुता, सच्चाई, सद्भाव इत्यादि को समाहित करना चाहिए नकारात्मक विचार ही चिंताओं, तनाव तथा जीवन की जटिलताओं के जनक होते हैं।

शारीरिक व मानसिक रूप से 'रिलैक्स' होने के लिए नियमित रूप से अभ्यास करना चाहिए। मेरे अनुभव से विश्रांति दो प्रकार से प्राप्त की जा सकती है:

(1) सामान्य कार्य करते समय जिन अंगो का उपयोग नहीं कर रहे हैं, उनको ढीला रखें। जैसे बैठे होने पर बात चीत करते समय हाथों-पैरों, कंधों को ढीला रखना चाहिए। यदि बोल नहीं रहें तो होठों, भौहों को स्वभाविक स्थिति में रखें। लिखते-पढ़ते समय, कार्य करते समय मन को एकाग्र रखना चाहिए। दूसरे कार्य के प्रति नहीं सोचना चाहिए। एक कार्य समाप्त करने के बाद दूसरा कार्य शुरू करना चाहिए।

(2) प्रात: काल, सायंकाल, या कार्य की समाप्ति के बाद 'शवासन' का अभ्यास करना चाहिए। जमीन पर दरी, कंबल बिछा कर सीधे लेटें। हाथ-पैर शरीर से थोड़ा दूर रखें, हथेली ऊपर, पंजे बाहर रख कर गहरी और धीरे-धीरे सांस लें और महसूस करें कि पैर से लेकर सर तक शरीर तनाव-मुक्त हो रहा है। शवासन में 5 से 10 मिनट तक रहें। दिन भर की शारीरिक, मानसिक थकान दूर हो जाएगी।

अंतिम और सबसे महत्वपूर्ण तथ्य है कि जीवन शैली, आदतों में बदलाव की कोई दवा की गोली या इन्जेक्शन नहीं है, जिसके उपयोग की एक सीमित अवधि होती है। इसमें निरंतरता आवश्यक है। यही स्वास्थ्यवर्धक जीवनशैली है, अत: इसको आजीवन अपनाना आवश्यक है।

❑

संदेश को लाखों वर्षों तक सुरक्षित किया जा सकता है

जो लोग आने वाली कई पीढ़ियों तक अपनी बात पहुंचाना चाहते हैं, उनके लिए एक अच्छी खबर है। जापान के वैज्ञानिकों ने एक ऐसा तरीका ढूंढ निकाला है जिसमें जीन में किसी संदेश को सुरक्षित रखा जा सकता है। अनुसंधान दल ने कहा है कि उसने बैक्टीरिया के डी. एन. ए में डिजिटल डेटा स्टोर करने की टेक्नोलॉजी तैयार की है। इस तरह, डेटा को लाखों वर्षों तक सुरक्षित रखा जा सकेगा। बैसिलस बैक्टेरियम नाम का यह बैक्टीरिया दो मेगाबाइट्स डेटा स्टोर कर सकता है। यह रोमन लिपि के 16 लाख अक्षरों के बराबर होगा। वैज्ञानिक माइक्रोस्कोप से इसका ट्रांसप्लांट कर सकते हैं। इन्हें सामान्य टेक्स्ट की तरह पढ़ा जा सकता है। टेक्नोलॉजी को अभी और सक्षम बनाने की जरूरत है। वैज्ञानिकों को इसके भविष्य में इस्तेमाल के बारे में उम्मीद है। ये बैक्टीरिया मिट्टी और नष्ट होने वाले पदार्थों में पाए जाते हैं। इनमें खराब से खराब मौसम में भी जीवित रहने की क्षमता होती है।

(7)

हमारा आहार

● डॉ. सी.पी. सिंह *

स्वास्थ्य के बारे में अकसर कहा जाता है कि 'जान है तो जहान है', तंदुरुस्ती लाख न्यामत, शरीरमाद्यम् खलु धर्मसाधनम्' वगैरह-वगैरह। उसके लिए हमें भोजन की आवश्यकता होती है। भोजन से ही हमें पौष्टिक तत्व तथा ऊर्जा की प्राप्ति होती है। पोषक तत्व भोज्य पदार्थों में निहित उपयोगी रासायनिक घटक होते हैं जिनका उपयुक्त मात्रा में उपलब्ध होना शारीरिक स्वास्थ्य के लिए बहुत जरूरी है। हमारा आहार संतुलित होना चाहिए। विद्वान लेखक ने प्रस्तुत लेख में इन्हीं घटकों और तत्वों का खुलासा करीने से किया है–

मनुष्य को जीवित रहने के लिए वायु, जल, के अतिरिक्त भोजन की आवश्यकता होती है। भोजन से हमें पोषक तत्व मिलते हैं। ये पोषक तत्व भोज्य पदार्थो में निहित उपयोगी रासायनिक घटक होते हैं जिनका उपयुक्त मात्रा में उपलब्ध होना शारीरिक स्वास्थ्य के लिए आवश्यक है।

भोजन के कार्य

(1) शारीरिक टूट-फूट की मरम्मत करना ।

(2) दैनिक कार्यों के लिए ऊर्जा या शक्ति प्रदान करना।

(3) शारीरिक वृद्धि करना ।

(4) रोगों से रक्षा एवं जैविक प्रक्रियाओं का संचालन करना।

भोजन के प्रकार

भोजन को प्रमुखत: निम्न 6 समूहों में बांटा गया है। इन्हें पोषक पदार्थ कहते हैं, जैसे-

(1) कार्बोहाइड्रेट

(2) प्रोटीन

(3) वसा — कार्बनिक अंश

(4) विटामिन

(5) खनिज लवण

(6) जल — अकार्बनिक अंश

कार्बोहाइड्रेट: इनकी रचना कार्बन, आक्सीजन, हाइड्रोजन के अणुओं से होती है। इन्हें सैकेराइड भी कहते हैं, जैसे

(1) मोनोसैकेराइड - ग्लूकोस, फ्रक्टोज, गैलक्टोस आदि।

(2) डाइसैकेराइड - लैक्टोज, सुक्रोज माल्टोस आदि।

(3) पॉलिसैकेराइड - स्टार्च, सेलुलोस आदि।

स्टार्च, शर्करा और सेलुलोस कार्बोहाइड्रेट के रूप है। चुकंदर, गन्ना, अंगूर तथा सभी मीठे फलों में शर्करा पर्याप्त मात्रा में विद्यमान होती है। हम जो आहार लेते हैं उनमें सर्वाधिक मात्रा में कार्बोहाइड्रेट होता है। ये हमें ऊर्जा प्रदान करते हैं। 1 ग्राम कार्बोहाइड्रेट से 4 कैलोरी उष्मा मिलती है। यही ऊर्जा शारीरिक कार्यों में प्रयुक्त होती है। इनकी कमी से शारीरिक वजन घट जाता है। कार्यशक्ति घट जाती है।

प्रोटीन: हमारे खाद्य का सबसे महत्वपूर्ण अंश प्रोटीन है। इनकी संरचना में कार्बन, हाइड्रोजन, ऑक्सीजन

* प्रवक्ता जंतु विज्ञान, राजकीय स्नाकोत्तर महाविधालय, नारायण नगर (डी डी हाट), पिथौरा गढ़ (उत्तराखंड)

के अतिरिक्त नाइट्रोजन का योग होता है। वस्तुत: प्रोटीन जटिल कार्बनिक यौगिक हैं। कभी-कभी ये फॉस्फोरस और सल्फरयुक्त भी होते हैं। प्रोटीन का निर्माण ऐमीनो अम्लों से होता है। ये शरीर के तंतु, मासपेशियों, बाल, त्वचा आदि का निर्माण करते हैं। कोशिका के समस्त तत्वों को प्रोटीन ही बनाता है। बढ़ते शिशुओं, जन्मदात्री माताओं, बच्चों को प्रोटीन लेना अत्यावश्यक होता है। प्रोटीन दो तरह का होता है:

(1) प्राणि प्रोटीन :- दूध (Casein), मांस, मछली, अंडा (albumin) आदि।

(2) वनस्पति प्रोटीन:- गेहूं (glutin), जौ, मक्का, दालें आदि।

प्राणि प्रोटीन प्रथम श्रेणी की प्रोटीन है। इनका अधिकांश भाग पाचित होकर अवशोषित कर लिया जाता है। जबकि वनस्पति प्रोटीन द्वितीय श्रेणी की प्रोटीन है, क्योंकि पाचनोपरांत इनका अल्पांश ही अवशोषित हो पाता है।

वसा- वसाओं का निर्माण कार्बन, हाइड्रोजन, ऑक्सीजन के अणुओं से होता है। वसाएं दो तरह की होती हैं।

(1) संतृप्त वसाएं :- घी, ठोस चर्बी में।

(2) असंतृप्त वसाएं :- मूंगफली व तिल के तेल में

उच्च कोटि की वसा पशुओं की चर्बी, पनीर, मक्खन,घी एवं मछली के तेल में मिलती है। कार्बोहाइड्रेट की अपेक्षा वसा में दुगुनी ऊर्जा संचित रहती है।

विटामिन - ये सक्रिय कार्बनिक यौगिक हैं। ये शरीर की आंतरिक क्रियाओं के संचालन में सक्षमता प्रदान करते हैं। यद्यपि इनकी आवश्यकता हमारे भोजन में अत्यल्प होती है, लेकिन इनके अभाव में मानव अनेक बीमारियों का शिकार हो जाता है। अबतक 20 से अधिक विटामिनों की खोज हो चुकी है। प्रमुख विटामिन निम्न हैं:

(1) वसा में घुलनशील विटामिन- ऐ. डी. ई. के.

(2) पानी में घुलनशील- विटामिन सी और बी समूह ।

विटामिन ए - इसे रेटिनाल भी कहते हैं। यह रोडाप्सिन रंगों का निर्माण करती है जिससे हम अंधकार में भी देख सकते हैं। इसकी कमी से रतौंधी (Night blindness) हो जाती है। यह दूध, मक्खन, मछली के यकृत के तेल, अंडा, गाजर, टमाटर और सभी हरी सब्जियों से मिलता है।

विटामिन बी समूह (B- complex) - शरीर में ऊर्जा के उपापचय की क्रिया यही संपादित करता है।

बी 1 या थायमिन (Thiamine)- इसे ऐन्टीबेरी विटामिन भी कहते हैं क्योंकि इसकी कमी से बेरी-बेरी (beriberi) रोग हो जाता है। चोकर-युक्त आटा, व दालें, तिलहन, मेवे, खमीर, मांस, मछली, अंडे आदि इसके प्रमुख स्रोत हैं।

बी 2 अथवा जी (B2 या G) - इसे राइबोफ्लेविने (Riboflavin) भी कहते हैं। इसकी कमी से शरीर के वजन में कमी आ जाती है। ओंठ व जिहवा में सूजन इत्यादि आ जाती है।

बी 5 या नियासिन (B5 या Niacin) - इसे निकोटिनिक अम्ल भी कहते हैं। इसकी कमी से पेलेग्रा रोग हो जाता है। इस विटामिन की कमी से त्वचा रूखी हो जाती है।

बी 6 या पाइरिडॉक्सिन - इसकी कमी से शारीरिक वृद्धि में रुकावट आती है और व्यक्ति अरक्तता (अनीमिया) पीड़ित हो जाता है।

पैंटोथिनिक अम्ल (Pantothenic Acid) - यह विटामिन शरीर में कोलेस्ट्रोल फॉस्फोलिपिड, स्टेरॉइड हार्मोन को शरीर में एकत्रित करता है। इसकी कमी स प्रौढो में पेलेग्रा जैसे लक्षण तथा बच्चों में चिड़-चिड़ापन व दस्त जैसी बीमारियां हो जाती है।

बायोटिन (Biotin) - वृद्धि के लिए आवश्यक है। नाड़ी तंत्र को प्रभावित करता है।

बी 12 या कोबालैमीन (Cobalamine)- वृद्धि के लिए आवश्यक है। न्यूक्लिओ प्रोटीन एवं रक्त कोशिकाओं के निमार्ण में सहायक है। इसकी कमी से शारीरिक कमजोरी होती है तथा वृद्धि में अवरोध आने लगता है।

विटामिन सी या एस्कॉर्बिक अम्ल - शरीर की वृद्धि में सहायक है। मसूड़ों को स्वस्थ रखने, दांतों के बनने में सहायता देने के अतिरिक्त यह रक्त वाहिकाओं को मजबूत बनाता है। इसकी कमी से स्कर्वी नामक बीमारी हो जाती है जिससे मसूड़े सूज जाते हैं और उनमें रक्तस्राव होने लगता है। यह विटामिन प्रमुखत: नींबू, संतरा, नारंगी, टमाटर, आंवला, हरीमिर्च, गोभी में पाया जाता है।

विटामिन डी या कैल्सिफिरॉल - इस विटामिन का

निर्माण हमारे शरीर में ही होता है। त्वचा के नीचे वसाओं में एरगोस्टेरोल (ergosterol) नामक यौगिक उपस्थित रहता है। जब त्वचा पर सूर्य की किरणें पड़ती है तो शरीर में उपस्थित प्रो-विटामिन डी, विटामिन डी में परिवर्तित हो जाता है। इसकी कमी से हड्डियाँ कमजोर हो जाती हैं। बच्चे में रिकेट्स (Rickets) की बीमारी तथा प्रौढ़ों में अस्थि-मृदुता (osteomalacia) का रोग हो जाता है। विटामीन डी के प्रमुख स्रोत, मछली का तेल, दूध, मक्खन एवं हरी सब्जियां आदि हैं।

विटामिन ई या टोकोफेरॉल - यह विटामिन जनन क्रियाओं के लिए आवश्यक है। इसकी कमी से स्त्री-पुरुषों में जनन शक्ति क्षीण होने लगती है। स्त्रियों में यह मासिक धर्म (menstrural cycle) को नियमित रखती है। यह नारियल के तेल, गेहूं, एवं हरी सब्जियों में प्रचुर मात्रा में पाया जाता है।

विटामिन के (Vitamin K) - यह विटामिन रक्त का थक्का बनाने (Clotting) में सहायक है। बड़ी आंत में रहने वाले जीवाणु इसका निर्माण करते हैं। सोयाबीन का तेल तथा टमाटर इसकी प्राप्ति के प्रमुख स्रोत हैं।

खनिज लवण (Mineral Salt)- उपरोक्त तत्वों के अतिरिक्त भोजन में कुछ खनिज तत्वों की भी आवश्यकता होती है जो कि जैविक क्रियाओं को नियंत्रित करते हैं। हमारे शरीर में यौगिकों के रूप में फॉस्फोरस, आयोडीन, पोटैशियम, तांबा, लोहा, कैल्सियम, सोडियम आदि खनिज तत्व प्रमुख है।

हमारे रुधिर की लाल रक्त कणिकाओं (R.B.C) में हीमोग्लोबिन नामक एक **लौह प्रोटीन** पाया जाता है। इसकी वजह से रक्त लाल होता है। यह तत्त्व आक्सीजन को अवशोषित कर सारे शरीर में पहुंचाता है। इस लौह तत्व की कमी से रक्त की ऑक्सीजन धारण क्षमता कम हो जाती है और व्यक्ति अरक्तता या अल्परक्तता (अनीमिया) ग्रस्त हो जाता है। मांस, अंडा, यकृत और हरी सब्जियों मे लोहा पर्याप्त मात्रा में पाया जाता है।

आयोडीन की कमी से थाइराइड ग्रंथि सूज जाती है और घेंघा (Goiter) निकल जाता है। सामान्य नमक में **सोडियम** और क्लोरीन दोनों उपस्थित रहते हैं। सोडियम के यौगिकों से भूख बनी रहती है और रक्त की संरचना ठीक बनी रहती है। इसी प्रकार **पोटैशियम** के यौगिक वृद्धि में सहायक होते हैं। ये दोनों खनिज तत्व हरी सब्जियों में पर्याप्त मात्रा में मिलते हैं।

क्लोरीन की आवश्यकता रुधिर की उचित रचना के लिए होती है तथा हाइड्रोजन क्लोरिक अम्ल (HCL) के निर्माण-हेतु भी इसकी आवश्यकता होती है जिससे आमाशय में भोजन का पाचन ठीक प्रकार से हो सके। सोडियम और क्लोरीन दोनों की कमी को हम साधारण नमक से पूरा कर सकते हैं।

कैल्सियम और **फॉस्फोरस** दांतों तथा हड्डियों को मजबूत बनाते हैं। पनीर, अंडे, दूध, मांस और हरी सब्जियों में इनके यौगिक प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं।

जल - जल हमारे आहार का एक आवश्यक तत्त्व हैं। हमारे शरीर के भार का तो तिहाई अंश जल ही होता है। हमारे दैनिक आहार में पानी का कुछ-न-कुछ अंश अवश्य होता है। फिर भी हमें इसके साथ 4.5 लीटर पानी पीना ही चाहिए। हमारे शरीर मे कोशिकाओं के अंदर जो प्रमुख अंश या जीवद्रव्य (protoplasm) है, पानी उसका अनिवार्य घटक है। जीवद्रव्य में 90 प्रतिशत जल ही होता है। इसी तरह, शारीरिक मांस-पेशियों में 75 प्रतिशत, हड्डियों में 22 प्रतिशत, रक्त में 91 प्रतिशत, दांतों और नाखूनों में 1प्रतिशत जल होता है। कभी कभी शरीर में निर्जलीभवन अर्थात् पानी की कमी हो जाने से जान जाने की नौबत आ जाती है। अत: जल 'जीवन का अमृत है'।

संतुलित आहार (Balanced Diet) - संतुलित आहार वह आहार है जो हमारे प्रतिदिन के आहार में उचित प्रकार के भोज्य पदार्थों को उचित मात्रा में पोषक तत्वों सहित उपलब्ध कराती है। वस्तुत: 1 ग्राम कार्बोहाइड्रेट के जारण से 4 कैलोरी, 1 ग्राम प्रोटीन के जारण से 4 कैलोरी तथा 1 ग्राम वसा के जारण से 9 कैलोरी ऊष्मा मिलती है। संतुलित आहार सभी व्यक्तियों के लिए एक सा नहीं होता है। यह व्यक्ति के आयु, लिंग, शरीर का आकार, मौसम, जलवायु, कार्य एवं परिश्रम पर निर्भर करता है।

संतुलित आहार से एक व्यक्ति को 2,958 कैलोरी चाहिए ही। यदि मात्रा उसे नहीं मिलती है तो वह अपने शरीर में संचित वसाओं का उपयोग करने लगता है जिसके फलस्वरूप उसका भार घटने लगता है और स्वास्थ्य निरंतर गिरने लगता है।

❑

8

विकलांगों के लिए बाधारहित परिवेश

• डॉ. रामकिशन *

नि:शक्तता अर्थात् विकलांगता का असर तब कम हो सकता है, जब हमारे समाज, स्कूल, आवास इत्यादि अवरोध या बाधा से रहित हो जाए। विकलांगों को आने-जाने, चलने-फिरने, अपना कार्य स्वयं करने में यदि न्यूनतम कठिनाई आए, कम से कम परेशानी आए तो विकलांगों के दैनिक जीवन निर्वाह में विकलांगता के प्रभाव को कम से कम किया जा सकता है।

अवरोध मुक्त, बाधा रहित वातावरण के तहत विकलांग व्यक्ति बच्चों या छात्र को स्वतंत्र रूप से पूर्ण सक्रिय बनाने के लिए यह अत्यंत आवश्यक है कि उन्हें सुरक्षित और सुविधायुक्त परिवेश प्रदान किया जाए, जिसमें बिना किसी घबराहट, परेशानी या कठिनाई से पूरे आत्मविश्वास के साथ कार्य करने हेतु तैयार हो सकें। इसके लिए जरूरी है कि सुविधायुक्त परिवेश की परिकल्पना में उन सिद्धांतो, उपायों का समायोजन किया जाएँ जिससे विकलांग श्रेणी के व्यक्ति को समाज, घरों दूकानों, दफ्तरों बाजारों, सरकारी भवनों, सिनेमा धरों, स्कूलों, कालेजों इत्यादि में अर्थात दैनिक जीवन में विकलांग व्यक्ति जितने भी तरह के कार्यों को करने में जिन इमारतों भवनों आदि से संपर्क करते हैं या, सामान्यतया उपयोग करते हैं उनका उपयोग करते समय उन्हें किसी प्रकार का कष्ट, असुरक्षा अथवा भय का वातावरण न मिले बल्कि पूर्ण निश्चित हो कर, निर्भयतापूर्वक इनका सरलतापूर्वक उपयोग कर सकें और विकलांगता की कोई भी श्रेणी या मात्रा, या शारीरिक स्थिति विकलांगों की क्रियाशीलता पर अधिक दुष्प्रभाव न डाल सके।

अवरोध से मुक्त बाधारहित भवन वह है जिसमें विकलांग व्यक्ति सहजता, सरलता से प्रवेश कर सके। भवन के प्रत्येक भाग/हिस्से या कमरे में बिना किसी बाधा या कष्ट के आ जा सके। व्हील चेयर प्रयोग करने वाला आराम से उसे मोड़ सके या घुमा सके। शौचालय अथवा स्नानघर का उपयोग सरलता से कर सकें। इस कार्य में कुशलता के लिए उचित रास्ता, मार्ग-प्रदर्शक, रैम्प, उचित लिफ्ट, पकड़ने के लिए रैलिंग, बड़े आकार के इंग्लिश सीट युक्त टॉयलेट, सभी गेटों के चौड़े दरवाजे आवश्यक होते है। जिनके सहारे व्हील चेयर उपयोग कर्ता विकलांग व्यक्ति भी सरलता एवं स्वतंत्रता पूर्वक किसी भवन का उपयोग कर सकता है। निम्नलिखित सावधानियों को घ्यान में रखते हुए निर्दिष्ट मानकों के अनुरूप भवन एवं नवनिर्मित क्षेत्रों की बनावट बनाई जाए तो वह विकलांगों के लिए अवरोध-मुक्त, बाधा-रहित वातावरण तैयार करने की दिशा में महत्वपूर्ण कदम साबित होगा।

रैम्प : सभी प्रकार के व्यावसायिक अथवा आवासीय भवनों, विभिन्न प्रकार के कार्यालयों के मुख्यद्वार पर तथा निकास द्वार पर कम से कम एक रैम्प होना चाहिए जो कि संकेतक चिह्न से सुसज्जित हो। रैम्प को सीढ़ियों के आसपास बनाना चाहिए। रैम्प कम से कम एक मीटर चौड़ा होना चाहिए, रैम्प का आकार 1:10 का होना चाहिए। रैम्प की ढलान का अनुपात स्तर न्यूनतम 1-12 तथा चौड़ाई 1200 मि.मी. होनी चाहिए। यदि रैम्प का उँचाई-स्तर कम हो अर्थात (5-10 से.मी.) हो तो रैम्प का आकार-स्तर 1:14 बनावट वाला हो सकता है।

व्हीलचेयर प्रयोग करने वाले के लिए, रैम्प से उतरने तथा चढ़ते समय लगभग डेढ़ मीटर चौड़े स्थान की आवश्यकता होती है इतने चौड़े क्षेत्र में व्हील चेयर को सरलतापूर्वक घुमाया अथवा मोड़ा जा सकता है। दृष्टिबाधित विकलांगो की सुविधा के लिए सभी किनारों की ढ़लान वाली दिशाओं की तरफ, अंतिम छोर पर चेतावनी देने

* वरिष्ठ प्रवक्ता (डाइट), मकान नं. 224, सरायपीपल थला, निकट आदर्श नगर, दिल्ली-11003,

वाले संकेत चिह्न लगे होने चाहिए जो कि यह इंगित करे कि रैम्प की निर्धारित नीचाई अब समाप्त होने वाली है। रैम्प के सभी किनारों पर, मोड़ पर हमेशा चेतावनी देने वाले संकेतक चिह्न समान ऊँचाई स्तर पर लगा दिए जाएं तो उचित होगा।

आदर्श रैम्प निर्माण में आरांभिक बिंदु से ऊपर तक की ऊँचाई 1500 मि.मि. होनी चाहिए जिससे व्हील चेयर प्रयोग करने वाले को उतरते तथा चढ़ते समय विश्राम करने हेतु उचित स्थान मिल जाए तथा व्हील चेयर प्रयोग कर्ता का व्हील पर नियंत्रण स्थापित रहे। यदि रैम्प का अनुपात 10:120 हो तो व्हील चेयर उपयोग कर्ता अधिक सुरक्षित रहता है।

रैम्प का अवतरण (लैडिंग) स्थान - रैम्प की ढलान में प्रत्येक समतल अवतरण का नियत नियमित अंतर स्थान सुनिश्चित होना चाहिए। इसका न्यूनतम आकार स्तर 1.000×2000 मि.मी. तथा कम से कम 1500 मि. मी. का समतल चबूतरा होना चाहिए।

हाथ डंडों का आकार एवं स्थान - रैम्प के कम से कम एक तरफ हाथ से पकड़ने वाले डंडे अवश्य लगे होने चाहिए। 1500 मि.मी. से अधिक उर्ध्वाधिर ढलान की तरफ, ढलान के दोनों तरफ हाथ-डंडे (हाथ से पकड़कर जाने वाले) होने चाहिए जिसकी समतल धरातल से ऊँचाई 800 मि.मी. से 900 मि.मी. तथा ढलान के ऊपरी तथा निचले किनारे कम से कम सुरक्षा की दृष्टि से उपयोगी एवं महत्वपूर्ण होते हैं।

चेतावनी देने वाने संकेतक चिह्न - नेत्रहीन विकलांग व्यक्तियों, बच्चों, छात्रों की सुरक्षा एवं सहायता देने के लिए रैम्प के ढलान के आरंभ से अंत तक के सिरे पर चेतावनी देने वाले संकेतक चिह्न तथा मार्ग-दर्शक चिह्न उपयुक्त स्थानों पर अंकित किए जाने चाहिए।

सीढ़ियाँ- बैसाखी या छड़ी प्रयोग करने वालों की सुरक्षा एवं सहायता की दृष्टि से प्रत्येक सीढ़ी या पायदान की अधिकतम ऊँचाई 150 मि.मी. तथा चौड़ाई 300 मि. मी. होनी चाहिए। सीढी/पायदान के बीच में कहीं छिद्र आदि न हो जिससे पैरों, बैसाखी या छड़ी के अटकने / उलझने की संभावना न बन सकें। सीढ़ियों / पायदान के साथ-साथ दोनों तरफ उतरने एवं चढ़ने के लिए रेलिंग की व्यवस्था 800-900 मि.मी. ऊँचाई पर की जाए जिसे पकड़ कर सरलता एवं सुगमता से ऊपर एवं नीचे आया-जाया जा सके।

सीढ़ियों के पायदान के भीतरी छोर समतल हों तथा (प्रत्येक सीढ़ी की चौड़ाई) 25 मि.मी. से अधिक न हो। हस्त ड्रिल सीढ़ी/पायदान की पूरी लंबाई पर समान रूप से एक जैसा निर्मित होना चाहिए तथा उसे सीढ़ी/पायदान के आरंभिक तथा अंतिम स्थान (छोर) से 300 मि. मी. तक सुरक्षा एवं सहायता के दृष्टिकोण से बनाया जाना चाहिए।

चेतावनी देने वाले संकेतक चिह्न- दृष्टि विकार ग्रस्त विकलांग श्रेणी के व्यक्तियों, बच्चों, छात्रों की सुविध ा एवं सुरक्षा के मद्देनजर चेतावनी देने वाले संकेतक चिह्न सीढ़ियों के आरंभ से अंत तक लगाए जाने चाहिए।

लिफ्ट- किसी भी भवन, सरकारी व्यवयायिक बिल्डिंग में लिफ्ट की स्थापना करते समय कम से कम एक लिफ्ट को विशेषत: विकलांगता-ग्रस्त व्यक्तियों की सुविधा एवं सुरक्षा को ध्यान में रखते हुए लगाया जाना जरूरी है। भारतीय मानक ब्यूरो ने लिफ्ट में आने-जाने के लिए अधि कतम 13 व्यक्तियों के एक साथ सफर करने हेतु मानक स्थापित किए हैं। लिफ्ट की आंतरिक गहराई 1100 मि.मी. चौड़ाई 200 मि.मी. तथा द्वार की ऊँचाई 910 मि.मी. निध रित की है।

किसी भी मंजिल के फर्शीय धरातल तथा लिफ्ट की सतह के बीच असामनता न हो। लिफ्ट के बाहर तथा अंदर लगे कॉल बटन, लिफ्ट के चढ़ने एवं उतरने के लिए प्रयोग किए जाने वाले बटन 900×1200 मि.मी. की ऊँचाई के दौरान कहीं भी बीच में उपयुक्त एवं अवरोध -मुक्त, बाधा रहित स्थान पर लगाए जाने चाहिए।

लिफ्ट को नियंत्रित करने वाली पट्टिका की ऊँचाई भी 900 से 1200 मि.मी. के बीच होनी चाहिए। इसमें प्रयुक्त किए जाने वाले बटन ब्रेल अथवा उभरे होने चाहिए जिसका आधार या पृष्ठभूमि का रंग अलग से दिखाई देने वाला चमकीला होना चाहिए जिससे दृष्टिबाधित विकलांग श्रेणी के लोगों को सुविधा मिल सके। लिफ्ट के अंदर की तरफ दोनों ओर सुविधा एवं सुरक्षा की दृष्टि से पकड़ने के लिए मजबूती के साथ उचित ग्रिप वाले हैंडल लगे होने चाहिए जिनकी ऊँचाई लिफ्ट की धरातलीय सतह से अधि कतम 900 मि.मी. होनी चाहिए। लिफ्ट के बाहर भी ब्रेल संकेतक लगे हों। लिफ्ट में ध्वनि तथा संकेतक स्पीकर भी

1606 HRD/2008—6A

लगे हों जो कि दृष्टि-बाधित एवं श्रवण-बाधित व्यक्तियों को उतरने एवं चढ़ते समय प्रत्येक तल पर लिफ्ट रुकने से कुछ समय पहले नंबर बता सकें।

बाधारहित स्नानघर एवं शौचालय सुविधा: शौचालय की आंतरिक परिसीमा 1500 मि.मी.×1750 मि.मी. होनी चाहिए। शौचालय स्नानघर आदि के दरवाजे कम से कम 900 मि.मी. चौड़े हों ताकि व्हीलचेयर प्रयोगकर्ता को किसी प्रकार की कठिनाई शौचालय में आने जाने हेतु न हो। शौचालय में प्रक्षालन स्थल के पास 900 मि.मी का न्यूनतम स्थान कम से कम होनी चाहिए। हाथ धोने के लिए व्हील चेयर उपयोगकर्ता की सुविधा अनुरूप नल की व्यवस्था की जाए। प्रक्षालन पात्र बगल की दीवार से 460 से 480 मि.मी. की दूरी पर हो तथा सामने से पृष्ठ भाग की दूरी 750 मि.मी. हो जिससे व्यक्ति सरलता से स्थान-परिवर्तन कर सके। स्नानघर में गोल नल की जगह लीवर लगे नल ज्यादा उपयोगी सिद्धांत होते हैं। प्रक्षालन पात्र की ऊँचाई समतल आधार भूमि से 500 मि.मी. हो तथा पृष्ठ भाग से सहारा देने के लिए उपयोगी व्यवस्था का प्रावधान सुनिश्चित किया जाए। वाश बेसिन के नीचे व्हील चेयर प्रयोगकर्ता के घुटने आ जाएं। दीवार के दोनों किनारों तथा पृष्ठभाग में सहारे के लिए हैंडल की ऊँचाई प्रक्षालन-पात्र से 280 मि.मी. से 300 मि.मी. की होनी चाहिए।

शौचालय एवं स्नानघर के दरवाजे यदि बाहर के तरफ खुलें तो अच्छा रहेगा। शौचालय का फर्श सुविधा दृष्टि से फिसलन वाला न हो अन्यथा विकलांग श्रेणी के व्यक्ति शारीरिक अक्षमता या अन्य कमजोरी के कारण फिसल कर गिर सकते हैं। शौचालय में टायलेट सीट की ऊँचाई व्हील चेयर जितनी हो अर्थात् 47 मि.मी. के लगभग हो। कम से कम एक मूत्रालय सभी भवनों/इमारतों में विकलांगों (जैसे बैसाखी उपयोग करने वालों) के हेतु होना चाहिए जिसमें दोनों तरफ सहारा देने के लिए हत्थे मजबूती से लगे हों। साथ ही हाथ पकडने के लिए दोनों ओर तथा सीने को सहारा देने हेतु सामने की ओर हाथ से पकड़ने के लिए डंडा लगा होना चाहिए। यदि टायलेट सीट नीची हो तो लकड़ी या स्टूल या ऐसी कुर्सी का उपयोग किया जा सकता है जिसमें बीच में बड़ा छेद बनाया गया हो। दृष्टि-बाधित विकलांग व्यक्ति की सहायता एवं सुविध ा के लिए सभी शौचालयों के दरवाजों की बादल में दीवार पर ब्रेल अथवा उभरे संकेतों अथवा महिला/पुरुष का संकेत करने वाली संकेत पट्टिका लगाई जानी चाहिए। यह समतल भूमि से 1400 से 1700 कि.मी. के मध्य लगाई जानी चाहिए। स्नानघर में बैठने की एक सीट लगभग 50 से.मी. वाली हो जिस पर व्हील चेयर प्रयोगकर्ता स्नान कर बिना किसी बाधा या सहायता के स्वयं व्हील चेयर का उपयोग कर सकता है। स्नानघर की दीवार में उचित ऊँचाई पर पकड़ने हेतु खूंटी या पाइप लगानी चाहिए। आकस्मिक एवं तत्काल सहायता हेतु कॉल बेल का प्रावधान किया जाए। दरवाजे की कुंडी ऐसी हो जिसे आकस्मिक स्थिति में बाहर खड़ा व्यक्ति भी खोल सके।

घर से बाहर निकलने तथा आने-जाने के लिए व्हील चेयर प्रयोगकर्ता हेतु रास्ता या बरामदा होना चाहिए। ऐसे रास्ते की चौड़ाई कम से कम 750 मि.मी. लगभग होती है। व्हील चेयर को मोड़ने तथा वापस उल्टी दिशा में आने के लिए लगभग 1500 मि.मी. चौड़ाई की जरूरत होती है। घर के दरवाजे की चौड़ाई 900 मि.मी. होनी चाहिए। दरवाजे का लीवर लट्टूदार हो तो उचित होगा। प्रवेश द्वार/दरवाजे के ऊपर ध्वनि संकेतक भी लगाया जाए ताकि उन्हें खोलने में कठिनाई न हो। घर में तौलिया टांगने के लिए रेलिंग, बिजली के पंखे, लाइट के स्विच आदि की ऊँचाई घुटने तथा कंधे की ऊँचाई के बीच हो, अर्थात् तौलिए हेतु 500 मि.मी. तथा बिजली के स्विच हेतु लगभग एक मीटर की ऊँचाई होनी चाहिए। घर में फर्नीचर, अलमारी, सामान रखने के बक्से खाने आदि इतनी ऊँचाई पर हों कि व्हील चेयर वाले व्यक्ति सरलता से सामान उठा सकें या वापस रख सकें।

सार्वजनिक स्थानों जैसे पार्क का प्रवेश द्वार ऊँचा-नीचा न हो यदि सीढ़ियाँ हैं तो उसके साथ रैम्प भी बना हो। फर्श ज्यादा चिकना अथवा फिसलन वाला न हो। पार्क की पगडंडियाँ कम से कम 100 मि.मी. चौड़ी हों। पार्क की नालियां पूरी तरह से ढकी हुई हों। नालियों के कवर के बीच में छेद न हो ताकि उसमें विकलांग व्यक्ति की बैसाखी या व्हील चेयर फंस न जाए।

पेयजल तथा अन्य सुविधाएँ : पीने के पानी का नल 750 मि.मी. ऊँचा होना चाहिए।

पेयजल वाले पानी के नल के पास कम से कम

1606 HRD/2008—6B

750×1200 मि.मी. की खुली जगह हो तथा घुटनों हेतु 750×200 मि.मी. गहरी एवं 750 मि.मी. ऊँची सुविधा उपलब्ध होनी चाहिए। सार्वजनिक टेलीफोन जमीन से 750 मि.मी. ऊँचा तथा लेटर बॉक्स जमीन से 750 मि.मी. ऊँचाई वाला हो तो उचित होगा।

व्हीलचेयर उपयोग कर्ता के लिए 500 मि.मी. की गहराई वाले अवरोध हेतु धरातल से अधिकतम पंहुच 1100मि.मी. होनी चाहिए।

साइड क्षेत्र में पहुँच- अवरोध-मुक्त, बाधा रहित, समतल धरातल से अधिकतम 1300 मि.मी. तथा न्यूनतम 250 मि.मी. होनी चाहिए।

अवरोध सहित / बाधा के साथ : अधिकतम धरातल से 860 मि.मी. ऊँचाई एवं 500 मि.मी. गहराई वाले अवरोध के लिए धरातल से 1200 मि.मी. होनी चाहिए।

सूचना प्रदान करने वाला संकेत चिह्न: किसी जन उपयोगी स्थान पर संकेतक या सूचना प्रदान करने वाले चिह्नों का उद्देश्य विशिष्ट स्थलों की जानकारी, चेतावनी एवं मार्ग की सूचना देना है। संकेतक चिह्न को समतल धरातल से 400 मि.मी. से 1600 मि.मी. की ऊँचाई पर लगाया जाना चाहिए ताकि वह स्पष्ट दृष्टिगोचर एवं सुविधाजनक रहे। इन संकेतक चिह्नों के द्वारा दिशा की जानकारी, आवागमन साधनों के मानक दर्शाए जाने चाहिए। संकेत चिह्नों के स्पष्ट चौकोर (वर्गाकार) पृष्ठभूमि में व्हील चेयर का संकेत तथा नीले पृष्ठभूमि में संकेत दायीं तरफ अंकित हो।

ठहराव / रुकने का स्थान : विकलांग व्यक्तियों की गाड़ियों हेतु विशेष गाड़ी-ठहराव की व्यवस्था की जाए।

1. भवन के मुख्य द्वार से अधिकतम 30 मीटर की दूरी पर दो गाड़ियों के ठहराव की व्यवस्था हो।
2. दृष्टिबाधित व्यक्तियों के लिए आवश्यक ध्वनि-संकेत भी जरूरी हैं।
3. ठहराव के स्थान की न्यूनतम दूरी 3.6 मीटर हो।
4. पैदल रास्ते को अन्य वाहन - मार्ग अवरुद्ध करें। इसके लिए व्हील चेयर स्टॉपर की व्यवस्था की जाए।
5. विकलांग व्यक्तियों की गाड़ियों हेतु आवश्यक ठहराव संबंधी स्पष्ट निर्देश जारी किए जाएं।

उपयुक्त विवेचना से स्पस्ट है कि विकलांगों के लिए सुगम भवन निर्माण में कोई अतिरिक्त कार्य नही करना पड़ता। ज्यादातर परिवर्तन ऊँचाई एवं सुगमता हेतु प्रयुक्त स्थान को नीचे करने से संबंधित होते हैं। इनमें कोई अतिरिक्त विशेष राशि का खर्च नहीं करना पड़ता है। रैम्प आदि के निर्माण में मामूली खर्च होता है। यदि भवन विकलांगों के लिए बाधा-रहित तथा अवरोध-मुक्त होंगे तो अन्य सामान्य लोगों के लिए भी सुगम होंगे। विकलांगों के लिए बाधा-रहित तथा अवरोधक मुक्त भवन-निर्माण में लागत एक से दो प्रतिशत से ज्यादा नही बढ़ती है। अत: समाज में केवल जागृति की जरूरत है कि वह इस दिशा में शीघ्र से शीघ्र सकारात्मक प्रयास करें। ❑

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. कार्यालय मुख्य आयुक्त विकलांग, वार्षिक प्रतिवेदन, 4 विष्णु दिगम्बंर (CCD) सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली वर्ष- 1998-99
2. दूर शिक्षा कार्यक्रम- सर्व शिक्षा अभियान (इग्नु) नई दिशाएँ समेकित शिक्षा हेतू शिक्षण-प्रशिक्षण साम्ग्री (इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, मैदान गढ़ी नई दिल्ली- अक्टुबर 2005
3. राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् ''प्राथमिक विद्यालय के लिए सहयोगी सामग्री'' एस.सी.ई. आर. टी. वरुण मार्ग, डिफेंन्स कालोनी, नई दिल्ली, (मई-2005)
4. मिश्र विनोद कुमार, विकलांगता, कारण बचाव व निदान, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली (वर्ष-2004)
5. डा. राम किशन ''भारत में सारक्षता अभियान'' कल्पज पब्लिकेशन, अशोक विहार, दिल्ली (वर्ष-2006)
6. साक्षरता एवं प्रारंभिक शिक्षा विभाग ''सर्व शिक्षा अभियान'' प्रारंभिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण हेतु एक कार्यक्रम, क्रियान्वयन के लिए कार्ययोजना, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली (वर्ष-2002)
7. मुख्य आयुक्त (नि:शक्तता) कार्यालय "नि: शक्त व्यक्तियों के सशक्तीकरण में जिला स्तर के अधिकारियों की भूमिका,'' सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय, 6 सरोजिनी हाउस भगवान दास रोड, नई दिल्ली, (वर्ष-2006)

(9)

सर्जरी शब्दावली

● सतीश चंद्र सक्सेना *

सभी नगरवासी 'सर्जरी' और 'सर्जन' शब्द से भलीभांति परिचित हैं क्योंकि अधिकांश व्यक्तियों को कभी न कभी सर्जन से परामर्श करना पड़ा होगा और हो सकता है कि कभी सर्जरी भी करानी पड़ी हो। सर्जरी को सामान्यत: आपरेशन का पर्यायवाची समझा जाता है। सर्जरी शब्द का प्रयोग दो अर्थो में होता है इनमें एक क्रिया है जो आपरेशन के निकट है और दूसरा अर्थ, आयुर्विज्ञान की शाखा अथवा विभाग को दर्शाता है। सर्जरी, सर्जन तथा आपरेशन के लिए पर्याय अनुमोदित हैं, यथा :

surgery 1. शल्यकर्म, शस्त्रकर्म, सर्जरी
2. शल्य चिकित्सा, सर्जरी, शल्यविज्ञान
surgeon शल्य चिकित्सक, सर्जन
operation (surgical operation) आपरेशन, शस्त्रकर्म

इस प्रकार सर्जरी के लिए शस्त्रकर्म की अथवा कर्म का प्रयोग किया जाता है। आयुर्विज्ञान की शाखा अथवा विभाग के रूप 'सर्जरी' के पर्याय 'शल्य विज्ञान' अथवा 'शल्य चिकित्सा' उपयुक्त प्रतीत होते हैं। इसी आधार पर surgeon के लिए 'शल्य कर्म चिकित्सक' न कह कर 'शल्य चिकित्सक या सर्जन उचित है। opertion के लिए 'शस्त्र कर्म' या 'ऑपरेशन' शब्द हैं। फिर भी, सामान्यत: सर्जरी, सर्जन और आपरेशन शब्द ही अधिक प्रचलित हैं। अंग्रेजी का 'सर्जरी' शब्द, क्रिया तथा संज्ञा दोनों रूपों को व्यक्त करता है। शब्दावली विशेषज्ञ आसानी से हार नही मानते, वे शब्द में निहित संकल्पना के अनुसार पर्याय निधारिण करते हैं और यह प्रयोक्ता पर निर्भर करता है कि वह इन पर्यायों को स्वीकार करे या न करे। प्रचलन को ध्यान में रखते हुए इस लेख में सर्जरी, सर्जन तथा आपरेशन शब्दों का ही प्रयोग किया जाएगा।

हमारे देश की अधिकांश जनता ग्रामीण है। रोगग्रस्त होने पर अथवा उग्र वेदना या शूल होने की स्थिति में व्यक्ति , समीपस्थ डॉक्टरों अथवा वैद के पास जाता है। गांव का डॉक्टर छोटे मोटे आपरेशन भी करता है जिसे ग्रमीण भाषा में "चीरा लगाना" कहा जाता है। मरीज को सामान्यत: कायचिकित्सक (physician) या सर्जन में अंतर का बोध नहीं होता। दुर्घटना या प्राकृतिक विपदा की स्थिति में व्यक्ति को समीपस्थ नगर के अस्पताल में जाकर सर्जन की शरण लेनी पड़ती है।

सामान्यत: सर्जरी दो प्रकार की होती है :

1. **नियोजित सर्जरी** - सर्जन से परामर्श करने के बाद जब रोगी को आपरेशन के लिए सलाह दी जाती है और रोगी आपरेशन के लिए तैयार हो जाता है तो आपरेशन की तिथि नियत की जाती है। आपरेशन की तिथि से पर्याय पहले 'आपरेशन की प्रक्रिया' प्रारम्भ हो जाती है। रोगी की कई विभागों में भली भांति जांच की जाती है तथा उसके विभिन्न परीक्षण किए जाते हैं। यह सब "सर्जिकल प्लानिंग" के अंतर्गत आता है। आँखों का भोतियां बिंदु (cataract) तथा काला बिंदु, घुंटने का आपरेशन, चिरकाली हृद रोग संबंधी आपरेशन तथा लगभग सभी आपरेशन आदि नियोजित सर्जरी के अंतगर्त आते हैं।

2. **आपात सर्जरी :** दुर्घटना, प्राकृतिक विपदा और आतंकवाद के शिकार हुए अथवा युद्ध में आहत सैनिकों अथवा गैरसैनिकों की आपात सर्जरी करनी पड़ती है। कभी कभी तीव्र शूल होने पर, आंतों को गुंठन हो जाने पर और इस प्रकार की कई अवस्थाओं में आपात पर और इस प्रकार की कई अवस्थाओं में आपात सर्जरी की जाती हैं।

बड़े अस्पतालों अथवा निजी क्लीनिकों में विशेषज्ञ के अनुसार सर्जरी का भी वर्गीकरण होता है। शरीर के अंग में विकृति के अनुसार संबद् सर्जन ही शल्य चिकित्सा करते हैं। यथा, कर्ण एवं नासा रोगों की सर्जरी ENT सर्जन या कर्णनासाकंठ विज्ञानी (otorhinolaryngologist), नेत्र रोग जैसे मोतिया बिंद (cataract), अथवा दृष्टिपटल में मधुमेह या अन्य कारणों से उत्पन्न दरारों का उपचार या

* (पूर्व) उननिदेशक वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग, बी.बी. 35 एक जनकपुरी, नई दिल्ली 110058

सर्जरी (ophthalmclogist), हृदयरोगों की सर्जरी हृद् वक्ष सर्जन (cardiothoracic surgeon), वृक्क, मूत्रवाहिनी एवं मूत्रालय की सर्जरी मूत्ररोग विज्ञानी (urologist), अस्थि रोग या विकलांगता की सर्जरी विकलांग शल्य चिकित्सक (orthopaedic surgeon), प्रसूति एवं स्त्री रोगों की सर्जरी महिला रोग विज्ञानी या प्रसूति रोग विज्ञानी (gynacologist & obstetrician), प्रमस्तिष्क अबुर्दों अथवा रुधिर आतंत्र (blood clot) से संबंधित सर्जरी न्यूरो सर्जन करते हैं। इसके अतिरिक्त अति विशिष्ट सर्जरी जैसे हृद् प्रतिरोपण, यकृत प्रतिरोपण, वृक्क प्रतिरोपण, फुप्फुस सर्जरी, Knee joint प्रतिस्थापन, श्रेणि नेखला प्रतिस्थापन (hip girdle replacement) से संबंधित सर्जरी संबद्ध सर्जन करते हैं। कैन्सर की सर्जरी सामान्य सर्जन के अतिरिक्त कैन्सर सर्जन करते हैं।

रोगी को आपरेशन थियेटर में ले जाने के बाद, आपरेशन टेबल पर लिटाने से पहले संज्ञाहरण या संवेदनाहरण (anaestheria) की क्रिया की जाती है। आपरेशन के प्ररूप तथा आपरेशन की अवधि के अनुसार निम्नलिखित तीन प्रकार के संज्ञाहरण किए जाते हैं:

स्थानिक संवेदनाहरण local anaestheria

अधिदृढ़तानिका संज्ञाहरण epidural anaestheria (इससे कमर के नीचे का भाग सुन्न हो जाता है।)

सार्वदैहिक संज्ञाहरण general anaestheria (संपूर्ण शरीर का संज्ञाहरण

शरीर के विभिन्न भागों पर की जाने वाली सर्जरी से संबंधित शब्दों के हिंदी पर्याय

abdominal surgery	उदरीय सर्जरी
aural surgery	कर्ण सर्जरी
cardiac surgery	हृद् सर्जरी
cerebral surgery	प्रमस्तिष्क सर्जरी
dental surgery	दंत सर्जरी
faci maillary surgery	आनन-ऊर्ध्वहनु सर्जरी
genito urinary surgery	जनन मूत्र सर्जरी
intracardiac surgery	अंतर्हृद् सर्जरी
minor surgery	लघु सर्जरी
open heart surgery	विवृत हृद् सर्जरी
oral surgery	मुख सर्जरी
orthopaedic surgery	विकलांग सर्जरी
plastic surgery	संधान सर्जरी
rectal surgery	मलाशय सर्जरी

आजकल cosmetic surgery (सौंदर्य सर्जरी) का प्रचलन बहुत बढ़ रहा है जो संधान सर्जरी का ही एक रूप है। इसके अतिरिक्त आधुनिक फैशन परस्त महिलाएं अपने स्तनों को सुंदर और सुडौल बनाने अथवा उन्हें वांछित आकार अर्थात स्तन वर्धन या स्तन न्यूनन के लिए सौंदर्य सर्जरी का सहारा ले रही है। यथा:

Mammoplasty	स्तन संधान
Mammilliplasty	चूचुक संधान

इतना ही नहीं महिलाएं। योनी-संधान (vagino-plasty) और कौमार्य की प्रतिपूर्ति के लिए योनिच्छद संधान कर्म (hymenoplasty) भी करा रही है।

सर्जरी से संबंधित नैदानिक प्रक्रियाएं और आपरेशनों का वर्गीकरण: अंग्रेजी शब्दावली ने स्वंय को समृद्ध बनाने के लिए ग्रीक वे लैटिन भाषा के उपसर्गों, प्रत्ययों और इनके संयोजी शब्दों का भरपूर प्रयोग किया है।

नैदानिक प्रक्रियाएं :

(i) - scopy शब्द का प्रयोग

यह संयोजी शब्द ग्रीक शब्द spokia से व्युत्पन्न है जिसका अर्थ दर्शन अथवा अंतर्दर्शन से संबंधित है यथा:

abdominoscopy	उदर अंतर्दर्शन
endoscopy	गुहांतदर्शन
hysteroscopy	गर्भाशय-दर्शन
laproscopy	अंतरुदर-दर्शन
larynogoscopy	स्वरयंत्र-दर्शन

इसका अर्थ विशेष यंत्र द्वारा शरीर के उस भाग का आंतरिक अवलोकन करना होता है।

(ii) - pathy शब्द का प्रयोग:

पद संयोजी शब्द लैटिन शब्द - pathia और ग्रीक शब्द - patheia से व्युत्पन्न है। इस शब्द का प्रयोग निम्नलिखित दो अर्थों में होता है।

(क) कष्ट या रोग अथवा विकृति; यथा:

arthropathy	संधि विकृति
dermopathy	त्वक् विकृति
enteropathy	आंत्र विकृति
nephropathy	वृक्क विकृति
neuromyopathy	तंत्रिका पेशी विकृति
neuropathy	तंत्रिका विकृति
pneumonpathy	फुप्फुसी विकृति
immunopathy	प्रतिरक्षा विकृति

(ख) इस शब्द का प्रयोग विशिष्ट चिकित्सा पद्धति को दर्शाने के लिए भी किया जाता है। यथा:

allopathty	एलोपैथी
homeopathy	होम्योपैथी

osteopathy	आस्टियोपैथी
naturopathy	प्राकृतिक चिकित्सा

(iii) - cele शब्द का प्रयोग :

यह संयोजी शब्द ग्रीक शब्द kele से व्युत्पन्न है जिसका अर्थ अर्बुद (tumor); विपरी गुहिका (cavity); हर्निया (hernia) होता है। यथा :

enterocele	आंत्र हर्निया
hydrocele	जल वृषण
laryngocele	स्वरयंत्र विपुरी
myelocele	सुषुम्ना हर्निया
tracheocele	श्वास प्रणाल हर्निया

आपरेशनों के प्रकार

(i) - incision (छेदन) शब्द का प्रयोग:

आपरेशन का प्रारंभ incision से ही होता है। कुछ विभिन्न प्रकार के incision इस प्रकार है:

abdominal incision	उदरीय छेदन
curvilinear incision	वक्ररेखीय छेदन
thoracic incision	वक्ष छेदन
tranverse incision	अनुप्रस्थ छेदन

कुछ भारतीय भाषाओं (जैसे उड़िया) में incision के लिए 'भेदन' शब्द प्रचलित है। वास्तव में 'छेदन' और 'भेदन' दोनों का अर्थ एक ही है।

(ii) - plasty (संधान कर्म) शब्द का प्रयोग:

यह शब्द प्रक्रियाओं की श्रृंखला दर्शाता है। यह संयोजी शब्द ग्रीक लैटिन शब्द plasty से व्युत्पन्न है जिसका अर्थ आकार देना होता है। प्लास्टिक सर्जरी में plastic शब्द भी plasty से आया है। कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं:

angioplasty	वाहिका संधान
arthoplasty	संधि संधान
fascioplasty	प्रावरणी संधान

(fascia शब्द का अर्थ संयोजी ऊतकों की चादर से है जो शरीर संरचना को बांधे रखती है या उस पर आवरण का कार्य करती है।)

neuro plasty	तंत्रिका संधान
oesophagoplasty	ग्रासनली संधान
thoracoplasty	वक्ष संधान
tracheoplasty	श्वास प्रणाल संधान
urethro plasty	मूत्रमार्ग संधान

(iii) - tomy (छेदन, उच्छेदन; विच्छेदन) शब्द का प्रयोग

यह संयोजी शब्द जो ग्रीक - tomos से व्युत्पन्न है जिसका अर्थ कर्तन (काटना) अथवा काट कर अलग करना होता है। सर्जरी में इस शब्द का प्रचुरता से प्रयोग होता है। यथा :

arthrectomy or arthotomy	संधि उच्छेदन
hepatectomy	यकृत उच्छेदन
hystrectomy	गर्भाशय उच्छेदन
enterectomy	आंत्र उच्छेदन
nephrectomy	वृक्क उच्छेदन
nephrolithotomy	वृक्क अश्मरी छेदन
opthalmectomy (excision of an eye)	नेत्रोच्छेदन
oesophageotomy	ग्रसनली छेदन
mastectomy or mammectomy	स्तन-उच्छेदन
radical mastectomy	समूल स्तनोच्छेदन
osteotomy	अस्थि विच्छेदन
vaginotomy	योनि उच्छेदन
vasectomy	शुक्रवाहक उच्छेदन

(iv) - stomy (छिद्रीकरण) शब्द का प्रयोग:

यह संयोजी शब्द ग्रीक शब्द stoma से व्युत्पन्न है जिसका अर्थ मुख या द्वार होता है। शरीर के किसी भाग में आपरेशन द्वारा छिद्रीकरण कर स्थायी मुख या द्वार बनाना। यथा:

enterostomy	आंत्र छिद्रीकरण
gastrostomy	जठर छिद्रीकरण
nephrostomy	वृक्क छिद्रीकरण
salpinagostomy	डिंब वाहिनी छिद्रीकरण
tracheostomy	श्वास प्रणाल छिद्रीकरण
cholecystostomy	पित्ताशय छिद्रीकरण

(V) - paxy (स्थिरण) शब्द का प्रयोग

यह संयोजी शब्द जो ग्रीक शब्द pexis से व्युत्पन्न है। इसका अर्थ आपरेशन की क्रिया द्वारा स्थिरण है। यथा:

spleenopexy	प्लीहा स्थिरीकरण
salpingopexy	डिंब वाहिनी स्थिरीकरण
nephropexy	वृक्क स्थिरीकरण
pneumopexy	फुप्फुस स्थिरीकरण

प्रस्तुत आलेख मूलत: लेखक द्वारा आयुर्विज्ञान शब्दावली कार्यशालाओं में दिए गए सर्जरी से संबंधित व्याख्यानों पर आधारित है। इस आलेख का उद्देश्य सुधी पाठकों को (सर्जरी की कुछ मूलभूत शब्दावली को अधिक गहराई में प्रवेश किए बिना), आयोग द्वारा विकसित शब्दावली से परिचित कराना है। यदि लेख में कुछ विसंगतियां रह गई हों तो लेखक क्षमप्रार्थी हैं। ❑

विविध स्तंभ

भारत में साक्षरता अभियान

लेखक- डॉ. राम किशन, मुल्य-670.00
प्रकाशक- कल्पज पब्लिकेशन सी-30, सत्यवती नगर, दिल्ली -110052

भारत में साक्षरता अभियान यद्यपि सरकारी तौर पर एक अभियान के रूप में चलाया गया है तथापि कुछ लोगो ने इसे एक मिशन के रूप में लिया और इसे अपना ध्येय मानकर अपने सीमित साधनों के माध्यम से इस मिशन को अपनी मंजिल तक पहुंचाने के लिए अथक प्रयास किया है, जिसकी आवश्यकता वर्तमान भारत में महसूस की जा रही है।

इसी संदर्भ में डा. राम किशन लिखित पुस्तक ''भारत में साक्षरता अभियान'' का उल्लेख किया जाना जरूरी है। डा. रामकिशन ने, जो स्वयं मडलीय शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान (डाइट)/ एस. सी. ई. आर. टी दिल्ली में वरिष्ठ प्रवक्ता के पद पर कार्यरत है। अपनी पुस्तक में उन सभी अनुभवों प्रयासों को शामिल किया है- जिसमें उन्होंने स्वयं भी भाग लिया है। इससे भी महत्वपूर्ण बात कि देश में राष्ट्रीय स्तर पर ऐसा प्रयास पहली बार किया गया है कि किसी नवीन वर्तमान कालीन संचालित साक्षरता अभियान पर शारीरिक रूप से असक्षम व्यक्ति द्वारा ऐसा महत्वपूर्ण कार्य किया गया है जो कि दूसरो के लिए भी एक प्रेरणादायक बन गया है।

इस पुस्तक में लेखक डा. राम किशन द्वारा दस अध्यायों के अंतर्गत प्रकाश डाला गया है। साक्षरता अभियान की आवश्यकता, महत्व एवं विश्व के अन्य देशों में एवं कार्यप्रणाली का विस्तृत वर्णन किया गया है। वास्तव में यहां तुलनात्मक समीक्षा की गई है जिससे पुस्तक को पठनीय एवं रोचक बनाया है। इस समीक्षात्मक सिंहावलोकन के माध्यम से पुस्तक प्रेमी पाठकों एवं नीति-निर्धारकों को बताया गया है कि हमें वास्तव में किन-किन क्षेत्रों, दिशाओं में और अधिक सक्रिय ढंग से निरन्तर जुटे रहने की आवश्यकता है।

साक्षरता अभियान से जुड़े अंत:संबंधी पूरे अध्याय के तहत साक्षरता से संबंधित मुद्दे, साक्षरता अभियान की प्रतिभुतियाँ तथा साक्षरता से संबंधित जानकारी देते हुए तार्किक विवेचन किया गया है।

अगले अध्याय में राष्ट्रीय साक्षरता मिशन से संबंधित जानकारी देते हुए उत्तर साक्षरता एवं सतत शिक्षा की अनिवार्यता पर प्रकाश डाला गया है। साथ ही महिला साक्षरता की स्थिति का स्वतंत्रता के उपरांत से अब तक के आंकड़ों के माध्यम से विश्लेषण करते हुए साक्षरता के महत्व का विस्तृत एवं तर्कसंगत वर्णण किया गया है।

साक्षरता अभियान के समक्ष चुनौतियों, कठिनाइयों तथा निरक्षरता उन्मूलन की असफलता के कारणों एवं बाधाओं का उल्लेख करते हुए इसकी सफलता के लिए उपयोगी सुझाव एवं सलाह तथा उपयुक्त अपनाई जा सकने वाली कार्यनीतियों का वर्णन भी किया गया है। पुस्तक में यथार्थवादी मूल्यांकित विश्लेषण करके सम्मेलन नियोजन की नवीन, अवधारणा के तहत इसके लक्ष्यों का विस्तृत विवेचन किया गया है।

पुस्तक के अंतिम अध्याय में ''सर्व शिक्षा अभियान करेगा भारत का कल्याण'' के तहत वर्तमान काल में संचालित सर्वशिक्षा अभियान के लक्ष्य, विशेषत: महत्वपूर्ण प्रभाव एवं प्रगति का विस्तृत विवेचन किया गया है। इस प्रकार पुस्तक में उन सभी विचारणीय एवं स्मरणीय बिंदुओं पर आवश्यकतानुसार संक्षिप्त एवं विस्तृत चर्चा की गई है जो कि साक्षरता अभियान का एक महत्वपूर्ण भाग है।

युवा लेखक डा. राम किशन द्वारा इस पुस्तक के माध्यम से साक्षरता जैसे बोझिल, अरुचिकर एवं थकाऊ विषय पर किया गया। उत्कृष्ट लेखन-कार्य पुस्तक-प्रेमी पाठकों के लिए नवीन एवं रुचीकर ज्ञान का भंडार बन गया है। भाषा शैली, सरल एवं प्रभावी है। पुस्तक में प्रयुक्त प्रामाणिक विश्वसनीय संदर्भ-ग्रंथों का उपयोग एवं महत्वपूर्ण आंकड़े इसे विश्वसनीयता प्रदान करते हैं। पुस्तक में वर्णित उच्च स्तरीय लेखन सामग्री। विश्लेषणत्मक मूल्यांकन पुस्तक के समस्त पाठकों, साक्षरता-कार्मियों, शोधकर्ताओं के लिए महत्वपूर्ण साबित होंगे। ❑

1606/HRD/2008 - 7

विनती

● निर्देश निधि *

सुनो, मैं वृक्ष हूं।
लेने दो झुझे सांसें, कि मैं
सांसें देने में भी दक्ष हूं।
ध्वनि प्रदूषण को टोकता हूं,
अप्रिय, अनचाही ढेर ध्वनियों को
अपने ही में रोकता हूं।
हर प्रदूषण पंगु मेरे सामने
सीना फटने से धरा का रोकता हूं।
मैं सुरमई बादलों से
जल चुरा लाने में भी दक्ष हूं।

मैं एक वृक्ष हूं।
दर्जी वसंत मेरी टहनियों पर
सिल जाता है, अनगिनत नई पत्तियां
जिनके पालने में झूलती है जिंदगी।
पूजो न पूजो, फर्श मत बनाओ मुझे
फलों-फूलों और घनी छाया के
महादान में दक्ष हूं।
मेरे हाथों में मौसम की छड़ी है।
रुको, मत काटो मेरी जड़ें,
करने दो महादान सांसो का,
कि जिंदगी भयानक मोड़ पर खड़ी है। ❑

जैव ईंधन और पर्यावरण

● डॉ. ए. के. चतुर्वेदी *

कोई भी कार्य करने के लिए हमें ऊर्जा की आवश्यकता होती है, जो जैव ईंधन और जलने-जलाने से प्राप्त होती है। इस प्रक्रम में ऊर्जा के साथ साथ कई दूषित गैसें भी उत्सर्जित होती हैं जो ग्रीन हाउस गैस के नाम से जानी जाती है। इन गैसों का हमारे स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है। हम कई घातक बीमारियों से ग्रस्त हो जाते हैं, कभी-कभार मृत्यु भी हो जाती है।

कोई भी कार्य करने के लिए ऊर्जा की आवश्यकता होती है। ऊर्जा ईंधन के जलने से प्राप्त होती है। जो ईंधन जीवित वस्तुओं से प्राप्त होता है उसे जैव ईंधन (बायोफ्यूअल) कहते हैं जैसे - लकड़ी, पशुखाद तथा कृषि अपशिष्ट, आदि। भारत में यह ईंधन भोजन पकाने के काम आता है। जैव ईंधन इतने प्रभावी होते हैं कि मौसम में परिवर्तन तक ले आते हैं। जैव ईंधन जलने पर ऊर्जा तो देते ही हैं साथ ही दूषित गैसें भी उत्सर्जित करते हैं जिससे पर्यावरण प्रदूषित हो जाता है। भारतीय प्रोद्योगिकी संस्थान, मुंबई, के डॉ. चंद्राबेंकटरमन के अनुसार जैव ईंधन के जलने से अधिक मात्रा में काला कार्बन उत्सर्जित होता है। यह काला कार्बन प्रकाश को अवशोषित कर तापमान को बढ़ा देता है। वातावरण का तापमान बढ़ता है तथा पृथ्वी का तापमान कम हो जाता है। यह तापमान-परिवर्तन वर्षा की मात्रा को प्रभावित करता है। कम परिवर्तन से सूखा तथा अधिक परिवर्तन से बाढ़ आती है।

काला कार्बन वायुमंडल में पहुंचकर पर्यावरण को प्रदूषित कर देता है। वैज्ञानिकों ने अनुसंधान में पाया कि भारतीय महासागर के क्षेत्र में पर्यावरण 10 गुना अधिक प्रदूषित है। भारत में खाना पकाने के लिए जलाए गए ईंधन से 42 प्रतिशत काला कार्बन प्राप्त होता है। इसी प्रकार जीवाश्मिक तेलों (फॉसिल आयल) के जलने से 25 प्रतिशत काला कार्बन प्राप्त होता है। जैव ईंधन के खुले में जलने से 33प्रतिशत काला कार्बन होता है।

दक्षिण एशिया में वायुमंडल में अधिक मात्रा में काला कार्बन पाया जाता है। यही समस्या संपूर्ण एशिया, अफ्रीका, दक्षिण अमेरिका में पाई गई है। काले कार्बन की उपस्थिति पर्यावरण को प्रदूषित कर जलवायु में परिवर्तन लाती है। इनसे हमारा स्वास्थ्य भी प्रभावित होता है। अल्पकार्बनिक ईंधन (क्लीनर फ्यूअल) का उपयोग कर काले कार्बन की मात्रा को कम किया जा सकता है। अल्पकार्बनी ईंधन द्रव पेट्रोलियम गैस (एल. पी. जी) है जिसके जलने पर बहुत ही कम काला कार्बन प्राप्त होता है। आज गरीब व अमीर घरों में खाना पकाने के लिए एल.पी.जी का उपयोग किया जा रहा है जो पर्यावरण व स्वास्थ्य के लिए हितकारी है।

कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय के पर्यावरण स्वास्थ्य वैज्ञानिक क्रिक स्मिथ के अनुसार ग्रीन हाउस गैसों के उत्पादन में विकसित राष्ट्रों की महत्वपूर्ण भूमिका है। विकासशील राष्ट्र भी ग्रीन हाउस गैसों के उत्पादन मे बहुत पीछे नहीं है। भौतिकी अनुसंधान प्रयोगशाला, अहमदाबाद के वैज्ञानिक ए. जयरामण के अनुसार भारत में काले कार्बन के उत्पादन में जैव ईंधन की मुख्य भूमिका है। भारतीय विज्ञान संस्थान, बेंगलूर के वायुमंडलीय केंद्र अध्यक्ष जे. श्रीनिवासन के अनुसार जैव ईंधन के उपयोग में और काले कार्बन के उत्पादन की मात्रा में सामंजस्य होना चाहिए।

जैव ईंधन के जलने से भवनों के भीतर का पर्यावरण भी प्रभावित होता है। तभी तो यह इतना घातक हो जाता है कि मृत्यु तक हो जाती है। जैव ईंधन के जलने से पर्यावरण तो प्रदूषित होती है, साथ ही नेत्र रोग, श्वास रोग, फेफड़ों के रोग, निमोनिया, कैंसर रोग भी हो जाते हैं। अत: जैव ईंधन के उपयोग पर रोक लगानी चाहिए जिससे पर्यावरण प्रदूषित न हो और साथ ही ये रोग उत्पन्न न हो।

1606 HRD/2008—3A

लेखक परिचय

डा. ए. के. चतुर्वेदी
26 रावेरी एन्कलेव, फेज-2,
रामधार रोड, अलीगढ़- 202001

डा. जगनारायण
कृषि एवं विज्ञान पत्रकार ईशान स्टूडियो,
श्री विश्वनाथ मंदिर,
काशी हिंदू विश्वविद्यालय,
वाराणसी- 221205

डा. जे. एल. अग्रवाल
आचार्य एवं अध्यक्ष शरीर क्रिया विज्ञान
राजकीय आयुर्विज्ञान महाविद्यालय,
कांगड़ा-176001 (हिमाचल प्रदेश)

डॉ. दीपक कोहली
5/104 विपुल खंड,
गोमतीनगर, लखनऊ

डा. नवीन कुमार बौहरा
प्लॉट 389, गली 10,
मिल्कमैन कॉलोनी,
पॉल रोड, जोधपुर

श्री सतीशचंद्र सक्सेना
पूर्व उपनिदेशक, वै. त. श. आयोग
बी. बी. 35 एफ, जनकपुरी
नई दिल्ली - 110058.

सुश्री निर्देश निधी
द्वारा- डॉक्टरप्रमोद निधि
विद्या भवन, कचहरी रोड,
बुलंदशहर, उ.प्र.

श्री बालकृष्ण
जी 848, कैलाश विहार, आवास विकाश
न. 1, कल्यानपुर, कानपुर- 208017

डा. शंकरलाल
पूर्व निदेशक, भारतीय दलहन अनुसंधान
संस्थान, जी 648, कैलाश विहार,
आवास विकास नं. 1, कल्याणपुर, कानपुर

डा सी. पी. सिंह
प्राध्यापक, जंतुविज्ञान
राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
नारायण नगर, पिथौरागढ़ (उत्तराखंड)

डा. सुरेश चंद भाटिया
पूर्व मुख्य अभियंता (डिजाइन),
284, सेक्टर 1, चिरंजीव विहार,
गाजियाबाद-201001

1606 HRD/2008—3B

आयोग के प्रकाशन

विषयवार शब्दावलियां/परिभाषा कोश

	मूल्य
भौतिकी	
भौतिकी शब्द-संग्रह	119.00
अंतरिक्ष विज्ञान शब्दावली	45.00
इलेक्ट्रॉनिकी परिभाषा कोश	22.00
तरल यांत्रिकी परिभाषा कोश	10.00
भौतिकी परिभाषा कोश	700.00
गृह विज्ञान	
गृह विज्ञान शब्द-संग्रह	600.00
कंप्यूटर विज्ञान एवं सूचना प्रौद्योगिकी	
कंप्यूटर विज्ञान शब्दावली	57.00
कंप्यूटर विज्ञान परिभाषा कोश	102.00
सूचना प्रौद्योगिकी शब्द-संग्रह	231.00
रसायन	
रसायन शब्द-संग्रह	592.00
इस्पात एवं अलौह धातुकर्म शब्दावली	55.00
उच्चतर रसायन परिभाषा कोश	17.00
धातुकर्म परिभाषा कोश	278.00
रसायन (कार्बनिक) परिभाषा कोश	25.00
वाणिज्य	
वाणिज्य शब्दावली	259.00
पूंजी बाजार एवं संबद्ध शब्दावली	79.00
वाणिज्य परिभाषा कोश	24.00
रक्षा	
समेकित रक्षा शब्दावली	284.00
गुणता नियंत्रण	
गुणवता नियंत्रण शब्दावली (अंग्रेजी-हिंदी तथा हिंदी-अंग्रेजी)	38.00
भाषा विज्ञान	
भाषा विज्ञान शब्दावली (अंग्रेजी-हिंदी तथा हिंदी अंग्रेजी)	113.00
भाषा विज्ञान परिभाषा (कोश खंड 1)	89.00
भाषा विज्ञान परिभाषा (कोश खंड 2)	59.00
जीव विज्ञान	
कोशिका जैविकी शब्द-संग्रह	62.00
पर्यावरण विज्ञान शब्द-संग्रह	381.00
प्राणि विज्ञान परिभाषा कोश	216.00
सूक्ष्म जैविकी परिभाषा कोश	45.00
कोशिका जैविकी परिभाषा कोश	121.00
लोक प्रशासन	
लोक प्रशासन शब्दावली	52.00
गणित	
गणित शब्द-संग्रह	143.00
गणित परिभाषा कोश	203.00
सांख्यिकी परिभाषा कोश	18.00
भूगोल	
भूगोल शब्द-संग्रह	200.00
भूगोल परिभाषा कोश	10.00
मानव भूगोल परिभाषा कोश	18.00
मानचित्र विज्ञाान परिभाषा कोश	231.00
अनुप्रयुक्त विज्ञान	
प्राकृतिक विपदा शब्दावली	17.00
जलवायु विज्ञान शब्दावली	131.00
मनोविज्ञान	
मनोविज्ञान परिभाषा कोश	9.50
मनोविज्ञान शब्दावली	247.00
इतिहास	
इतिहास परिभाषा कोश	20.50
प्रशासन	
प्रशासन शब्दावली	20.00
प्रशासन शब्दावली (हिंदी-अंग्रेजी)	20.00
शिक्षा	
शिक्षा परिभाषा कोश खंड-1	13.50
शिक्षा परिभाषा कोश खंड-2	99.00
आयुर्विज्ञान	
आयुर्विज्ञान परिभाषा कोश (शल्य विज्ञान)	338.00
आयुर्विज्ञान के सामान्य शब्द एवं वाक्यांश (अंग्रेजी-तमिल-हिंदी)	279.00
समाज शास्त्र	
समाज कार्य परिभाषा कोश	16.25
समाज शास्त्र परिभाषा कोश	71.40

	मूल्य
नृविज्ञान	
सांस्कृतिक नृविज्ञान परिभाषा कोश	24.00
बृहत् पारिभाषिक शब्द-संग्रह:	
बृहत् पारिभाषिक शब्द-संग्रह: विज्ञान, खंड 1, 2	174.00
बृहत् पारिभाषिक शब्द-संग्रह : विज्ञान खंड 1,2	150.00
बृहत् पारिभाषिक शब्द-संग्रह : विज्ञान (हिंदी-अंग्रेजी)	236.00
बृहत् पारिभाषिक शब्द-संग्रह : मानविकी और सामाजिक विज्ञान खंड 1,2	292.00
बृहत् पारिभाषिक शब्द-संग्रह : मानविकी और सामाजिक विज्ञान (हिंदी-अंग्रेजी)	350.00
बृहत् पारिभाषिक शब्द-संग्रह : कृषि विज्ञान	278.00
बृहत् पारिभाषिक शब्द-संग्रह : आयुर्विज्ञान, भेषज विज्ञान, शारीरिक नृविज्ञान	239.00
बृहत् पारिभाषिक शब्द-संग्रह : आयुर्विज्ञान, कृषि एवं इंजीनियरी (हिंदी-अंग्रेजी)	48.50
बृहत् पारिभाषिक शब्द-संग्रह : मुद्रण इंजीनियरी	48.00
बृहत् पारिभाषिक शब्द-संग्रह : इंजीनियरी (सिविल, विद्युत्, यांत्रिक)	340.00
बृहत् पारिभाषिक शब्द-संग्रह : पशु चिकित्सा केंद्र	82.00
बृहत् पारिभाषिक शब्द-संग्रह : प्राणि विज्ञान	311.00
भू-विज्ञान	
भूविज्ञान शब्द-संग्रह	88.00
सामान्य भूविज्ञान शब्दावली	101.00
आर्थिक भूविज्ञान शब्दावली	75.00
भूभौतिकी शब्दावली	67.00
शैल विज्ञान शब्दावली	82.00
खनिज विज्ञान शब्दावली	130.00
अनुप्रयुक्त भूविज्ञान शब्दावली	115.00
भू-विज्ञान परिभाषा कोश	63.00
संरचनात्मक भूविज्ञान परिभाषा कोश	13.00
संरचनात्मक भूविज्ञान शब्दावली	73.00
शैल विज्ञान परिभाषा कोश	153.00
पेट्रोलियम प्रौद्योगिकी परिभाषा कोश	173.00
खनन एवं भूविज्ञान शब्द-संग्रह	32.00
संरचनात्मक भूविज्ञान एवं विवर्तनिकी	15.00
जीवाश्म विज्ञान शब्दावली	129.00
कृषि	
रेशम विज्ञान शब्द-संग्रह	50.00
कृषि कीट विज्ञान परिभाषा कोश	75.00
सूत्रकृमि विज्ञान परिभाषा कोश	125.00
मृदा विज्ञान परिभाषा कोश	77.00
इंजीनियरी	
रासायनिक इंजीनियरी शब्द-संग्रह	51.00
विद्युत् इंजीनियरी परिभाषा कोश	81.00
यांत्रिक इंजीनियरी परिभाषा कोश	94.00
सिविल इंजीनियरी परिभाषा कोश	61.00
तरल यांत्रिकी परिभाषा कोश	10.00
वनस्पति विज्ञान	
वनस्पति विज्ञान शब्द-संग्रह	86.00
वनस्पति विज्ञान परिभाषा कोश	75.00
पादप आनुवंशिकी परिभाषा कोश	75.00
पादप रोग विज्ञान परिभाषा कोश	75.00
पुरावनस्पति विज्ञान परिभाषा कोश	80.50
दर्शनशास्त्र	
भारतीय दर्शन परिभाषा (कोश खंड 1)	151.00
भारतीय दर्शन परिभाषा (कोश खंड 2)	124.00
भारतीय दर्शन परिभाषा (कोश खंड 3)	136.00
दर्शन शास्त्र परिभाषा कोश	198.00
पुस्तकालय विज्ञान	
पुस्तकालय विज्ञान परिभाषा कोश	49.00
पत्रकारिता	
पत्रकारिता परिभाषा कोश	87.50
पत्रकारिता एवं मुद्रण शब्दावली	12.25
पुरातत्व विज्ञान	
पुरातत्व विज्ञान परिभाषा कोश	509.00
कला	
पाश्चात्य संगीत परिभाषा कोश	343.00
प्रबंधन विज्ञान परिभाषा कोश	170.00
अर्थशास्त्र	
अर्थशास्त्र परिभाषा कोश	117.00
अर्थमिती परिभाषा कोश	17.65
अन्य	
अंतराष्ट्रीय विधि (परिभाषा कोश)	344.00
नाट्यशास्त्र, फिल्म एवं टेलीविजन परिभाषा कोश	200.00
नाट्यशास्त्र, फिल्मी एवं टेलीविजन शब्दावली	75.00

संदर्भ ग्रंथ

	मूल्य
ऐतिहासिक नगर	195.00
प्राकृतिक एवं सांस्कृतिक नगर	109.00
समुद्री यात्राएं	79.00
विश्व दर्शन	53.00
अपशिष्ट प्रबंधन	17.00
कोयला (एक परिचय) **परिवर्तित संस्करण**	425.00
रत्न विज्ञान (एक परिचय)	115.00
वाहितमह एवं आपंक : उपयोग एवं प्रबंधन	40.00
पर्यावरण प्रदूषण: नियंत्रण एवं प्रबंधन	23.25
भारत में गैस उत्पादन एवं प्रबंधन	540.00
भारत में ऊसर भूमि एवं फसलोत्पादन	559.00
2 दूरीक एवं 2 मानकित समाष्टियों में संपात एवं स्थिर बिंदु समीकरणों के साधन	68.00
भारत में प्याज एवं लहसुन की खेती	82.00
पशुओं से मनुष्यों में होने वाले रोग	60.00
ठोस पदार्थ यांत्रिकी	995.00
वैज्ञानिक शब्दावली: अनुवाद एवं मौलिक लेखन	34.00
मृदा-उर्वरता	410.00
ऊर्जा-संसाधन और संरक्षण	105.00
पशुओं के कवकीय रोग, उनका उपचार एवं नियंत्रण	93.00
पराज्यमितीय फलन	90.00
सामाजिक एवं प्रक्षेत्र वानिकी	54.00
विश्व के प्रमुख धर्म	118.00
पृथ्वी : उद्‌भव और विकास	470.00
पृथ्वी से पुरातत्व	40.00
इलेक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शी	90.00
इलेक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शी	40.00

	मूल्य
द्रवचालित मशीन	66.50
मैग्नेसाइट : एक भूवैज्ञानिक अध्ययन	214.00
मृदा एवं पादप पोषण	367.00
नलकूप एवं भौमजल अभियांत्रिकी	398.00
विश्व के प्रमुख धर्मों में धर्मसमभाव की अवधारणा : एक तुलनात्मक अध्ययन	490.00
समकालीन भारतीय दर्शन के कुछ मानववादी चिंतक: तुलनात्मक एवं समीक्षात्मक अध्ययन	153.00
पादपों में कीट प्रतिरोध और समेकित कीट प्रबंधन	367.00
स्वतंत्रता-पूर्व हिंदी में विज्ञान लेखन	176.00
भेड़ बकरियों के रोग एवं उनका नियंत्रण	343.00
भविष्य की आशा : हिंद महासागर	154.00
भारतीय कृषि का विकास	155.00
विकास मनोविज्ञान भाग-1	40.00
विकास मनोविज्ञान भाग-2	30.00
कृषिजन्य दुर्घटनाएं	25.00
इलेक्ट्रानिक मापन	31.00
वनस्पति विज्ञान पाठमाला	16.00
इस्पात परिचय	146.00
जैव-प्रौद्योगिकी : अनुबंधन एवं विकास	134.00
विश्व के प्रमुख दार्शनिक	433.00
प्राकृतिक खेती	167.00
हिंदी विज्ञान पत्रकारिता : कल, आज और कल	167.00
मानसून पवन: भारतीय जलवायु का आधार	112.36
हिंदी में स्वतंत्रता परवर्ती विज्ञान लेखन	280.00

ग्राहक फार्म

अध्यक्ष,
वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग,
पश्चिम खंड-7, रामकृष्णपुरम्,
नई दिल्ली - 110066

महोदय,

कृपया मुझे "विज्ञान गरिमा सिंधु" (त्रैमासिक पत्रिका) का एक वर्ष के लिए मास..................से ग्राहक बना लीजिए। मैं पत्रिका का वार्षिक सदस्यता शुल्क..................रुपये, अध्यक्ष, वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग, नई दिल्ली के पक्ष में, नई दिल्ली स्थित किसी भी अनुसूचित बैंक में देय डिमांड ड्राफ्ट सं. .... दिनांक.................... बैंक का नाम.. द्वारा भेज रहा /रही हूं। कृपया पावती भिजवाएं।

नाम ....

पूरा पता ....

....

....

भवदीय

हस्ताक्षर

सदस्यता शुल्क:	भारतीय मुद्रा	विदेशी मुद्रा	
प्रति अंक (व्यक्तियों/संस्थाओं के लिए)	रु. 14•00	पौंड 1.64	डॉलर 4.84
वार्षिक (व्यक्तियों/संस्थाओं के लिए)	रु. 50.00	पौंड 5.83	डॉलर 18.00
प्रति अंक (विद्यार्थियों के लिए)	रु. 8.00	पौंड 0.93	डॉलर 10.80
वार्षिक (विद्यार्थियों के लिए)	रु. 30.00	पौंड 3.50	डॉलर 2.88

डिमांड ड्राफ्ट "अध्यक्ष, वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग" के पक्ष में नई दिल्ली स्थित किसी भी अनुसूचित बैंक में देय होना चाहिए। कृपया ड्राफ्ट के पीछे अपना नाम व पूरा पता भी लिखें। ड्राफ्ट 'एकाउंट पेई' होना चाहिए।

यदि ग्राहक विद्यार्थी है तो कृपया निम्न प्रमाण-पत्र भी संलग्न करें:

विद्‌यार्थी-ग्राहक प्रमाण पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि कुमारी/श्रीमती/श्री ....

इस विद्‌यालय/महाविद्‌यालय/विश्वविद्‌यालय के .... विभाग के/छात्र/की छात्रा हैं।

हस्ताक्षर

(प्राचार्य/विभागाध्यक्ष)
(सील)

प्रकाशन विभाग, भारत सरकार के बिक्री केंद्रों की सूची

क्र. सं.	पता
1.	प्रकाशन नियंत्रक प्रकाशन विभाग, (शहरी मामले व रोजगार मंत्रालय), सिविल लाइन्स, दिल्ली - 110054
2.	किताब महल प्रकाशन विभाग, भारत सरकार बाबा खड्ग सिंह मार्ग, स्टेट एंपोरियम बिल्डिंग, यूनिट नं. 21, नई दिल्ली - 110001
3.	पुस्तक डिपो प्रकाशन विभाग, भारत सरकार के. एस. राय मार्ग, कोलकाता - 700001
4.	बिक्री काउंटर, प्रकाशन विभाग, भारत सरकार, सी. जी. ओ. कॉम्प्लेक्स न्यू मेरीन लाइन्स, मुंबई - 400020
5.	बिक्री काउंटर, प्रकाशन विभाग, उद्योग भवन गेट नं. 3, नई दिल्ली - 110001
6.	बिक्री काउंटर, प्रकाशन विभाग, भारत सरकार, (लॉयर्स चैंबर) दिल्ली उच्च न्यायालय नई दिल्ली - 110003
7.	बिक्री काउंटर, प्रकाशन विभाग, संघ लोक सेवा आयोग, धौलपुर हाउस, नई दिल्ली - 110001

MGIPRRND—1606 HRD/2008—1,500 Copies

पाठसंग्रह (मोनोग्राफ) योजना

विषय-क्षेत्रः

वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग हिंदी में विभिन्न वैज्ञानिक तथा तकनीकी विषयों पर पाठ-संग्रह (मोनोग्राफ) प्रकाशित करता है जिसके माध्यम से एक पुस्तिका के रुप में एक अकेले विषय की विस्तृत जानकारी हासिल की जा सकती है । ये पाठ-संग्रह (मोनोग्राफ) पाठक को पूरक पठन-सामग्री उपलब्ध कराते है ।

पाठ-संग्रहो के निर्माण एवं प्रकाशन की प्रकिया :

उपर्युक्त योजना के लिए आयोग द्वारा पालन की गई प्रकिया इस प्रकार है :

(1) वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग दैनिक समाचार-पत्रों में एक विज्ञापन निकालता है जिसके अनुसार विश्वविद्यालय पाठ्यविवरण से संबंधित विषयों पर मोनोग्राफ लिखने के इच्छुक लेखकों से पांडुलिपियां आमंत्रित की जाती हैं ताकि पुस्तकों का प्रयोग संदर्भ-सामग्री या सूचना सोत के रूप में किया जा सके । विश्वविद्यालयों/संस्थाओं को भी परिपत्र भेजे जाते हैं ।

(2) सबसे पहले लेखकों से यह अनुरोध किया जाता है कि वे उस शीर्षक का सार-संक्षेप भेजें जिस पर वे मोनोग्राफ लिखना चाहते हैं ।

(3) सार-संक्षेप के प्राप्त होने पर उसे विषय के कम से कम 2 विशेषज्ञों द्वारा समीक्षा किए जाने के लिए भेजा जाता है ।

(4) समीक्षकों का अनुमोदन प्राप्त करने के बाद लेखक आयोग के साथ एक करार पर हस्ताक्षर करता है और लेखक को करार के अनुसार कार्य करने के लिए अनुमति दे दी जाती है ।

(5) लेखकों को आयोग द्वारा निर्मित शब्दावली का प्रयोग करना होगा । उनसे आशा की जाती है कि वे करार में दिए अनुदेशों का पालन करते हुए आयोग को संपूर्ण पांडुलिपि भेजेंगे ।

(6) अंतिम पांडुलिपि के प्राप्त होने पर उसकी समीक्षा आयोग मे समीक्षक (समीक्षकों) की सहायता से एक समिति द्वारा की जाती है ।

(7) पांडुलिपि का प्रकाशन सामान्य प्रकिया का पालन करते हुए किया जाता है ।

(8) आयोग अपनी ओर से भी विख्यात लेखको से विनिर्दिष्ट विषयों/क्षेत्रों पर पांडुलिपियां आमन्त्रित कर सकता है ।

©
भारत सरकार
प्रकाशन नियंत्रक
जुलाई-सितंबर-2007

पी. सी. एस. टी. टी. 7-9-2007
1500

आयोग से निम्नलिखित प्रकाशन निःशुल्क प्राप्त करें:

1. वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग–प्रगति एवं उपलब्धियां
2. बृहत् प्रशासन शब्दावली (अंग्रेजी-हिंदी)
3. बृहत् प्रशासन शब्दावली (हिंदी-अंग्रेजी)
4. कंप्यूटर की मूलभूत शब्दावली (अंग्रेजी-हिंदी)
5. गणित की मूलभूत शब्दावली (अंग्रेजी-हिंदी)
6. भूगोल की मूलभूत शब्दावली (अंग्रेजी-हिंदी)
7. भूविज्ञान की मूलभूत शब्दावली (अंग्रेजी-हिंदी)
8. भौतिकी की मूलभूत शब्दावली (अंग्रेजी-हिंदी)
9. पशुचिकित्सा विज्ञान की मूलभूत शब्दावली (अंग्रेजी-हिंदी)
10. वनस्पतिविज्ञान की मूलभूत शब्दावली (अंग्रेजी-हिंदी)
11. कोयला उद्योग की मूलभूत शब्दावली (अंग्रेजी-हिंदी)
12. कृषिविज्ञान की मूलभूत शब्दावली (अंग्रेजी-हिंदी)
13. पर्यावरणविज्ञान की मूलभूत शब्दावली (अंग्रेजी-हिंदी)

©कापीराइट 2005
प्रकाशक :
वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग
मानव संसाधन विकास मंत्रालय (माध्यमिक और उच्चतर शिक्षा विभाग),
भारत सरकार, पश्चिमी खंड-7, रामकृष्णपुरम,
नई दिल्ली-110 066

नियंत्रक, प्रकाशन विभाग, सिविल लाइन्स, दिल्ली-110054 द्वारा प्रकाशित तथा प्रबन्धक, भारत सरकार मुद्रणालय, रिंग रोड, मायापुरी, नई दिल्ली-110064 द्वारा मुद्रित
2008